चन्दामामा
दिसम्बर १९८९

रामानंद सागर कृत
रामायण
चित्र-कथा
१२ विभागों में । हिंदी और अंग्रेज़ी में ।
प्रति विभाग का मूल्य ५ रुपये
रामायण
चन्दामामा
विजया कम्बाइन्स
१८८, एन्.एस्.के. मार्ग, वडपलनी,
मद्रास ६०० ०२६ द्वारा प्रकाशित
अनुमति प्राप्त
सागर एन्टरप्राइजस
नटराज स्टुडिओज, १९४ अंधेरी कुर्ला रोड, मुंबई-४०० ०६९.
ग्रंथ-क्रमांक ३ अब समाचारपत्र-विक्रेताओं के पास उपलब्ध

डायमंड कॉमिक्स में
नन्हें मुन्नों की पहली पसंद
महाबली शाका और गुप्त घाटी
फौलादी सिंह और जालिम सरदार
चाचा चौधरी और सुल्तान अली फरमान अली
लम्बू मोटू और शैतान कोबरा
ताऊ जी और अनोखा शैतान
मोटू छोटू और हवेली का भूत
अंकुर और सफेद कबूतर
फौलादी सिंह - VI
यहाँ से काटिये
ऐसे 10 कूपन काटकर भेजें और साबू का रंगीन पोस्टर व चाचा चौधरी का स्टिकर मुफ्त प्राप्त करें।
मनोरंजक बाल साहित्य
पंजाब की नैतिक कथाएँ 8.00
हरियाणा के जन जीवन की कहानियाँ 8.00
हिमाचल की लोक कथाएं 8.00
पंजाब की लोक कथाएं 8.00
उत्तर प्रदेश की लोक कथाएं 8.00
बिहार की नीति विवेक की कहानियाँ 8.00
मध्य प्रदेश की मधुर कहानियाँ 8.00
रेडक्रास की कहानी 8.00
रोचक सत्य 8.00
राजस्थान के रण बांकुरे 8.00
मिलकर गायें गीत 8.00
सतरंगी इन्द्रधनुष 8.00
सीख के सोपान 8.00
लोकनीति की बातें 8.00
बोध कथाएँ 8.00
नीति कथाएं 8.00
पौराणिक कथाएं 8.00
महापुरुषों की कथाएं 8.00
आदर्श नारी रत्न 8.00
पांच आलोक स्तंभ 8.00
पांच सितारे गगन के 3.00
सात सितारे गगन के 3.00
मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम 3.00
संतोषी माता 3.00
दुर्गा माता 3.00
स्वामी रामतीर्थ 3.00
विवेकानन्द 3.00
महाभारत के रोचक प्रसंग 3.00
वैष्णो देवी 3.00
भगवान श्री कृष्ण 3.00
डायमंड कॉमिक्स प्रा. लि.
2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

पैरीज़ टॉफ़ियां और बिस्किट- हर किसी को भायें.
PARRY'S PAGE
पिछली बार तुमने हमारे साथ (याने कि कैरामिल्क, कॉफ़ी बाइट, ट्राय मी और मेरे साथ) जानवरों की अजीबोगरीब दुनिया की सैर की थी न? तो आओ इस बार हम तरह-तरह की सवारियों के मज़े लूटें. सवारियों की दुनिया भी कोई कम दिलचस्प नहीं होती. तो बच्चो, हमेशा की तरह अपने पैरीज़ पेज को काट कर जतन से रख दो ताकि देखते ही देखते तुम्हारा अपना विश्व-कोश तैयार हो जाए.
आओ सवारी करें!
सबसे पहले साइकिल. तो पैडल साइकिल का आविष्कार सन् १८३९ में स्कॉटलैंड के एक लोहार ने किया था. आज भी मानवी-शक्ति से चलने वाला सबसे तेज़ रफ़्तार वाहन साइकिल ही है. रेसिंग साइकिलिस्ट तो ७८ कि.मी. प्रति घंटा की रफ़्तार से साइकिल चला सकते हैं.
शायद तुम जानते हो की पुराने ज़माने में खोजकर्ता, लकड़ी के लट्ठों के बेड़ों पर यात्रा करते थे. लेकिन आज दुनिया के सबसे बड़े जहाज क्वीन एलिज़ाबेथ 2 में २००० यात्री एक साथ यात्रा कर सकते हैं. इसके अलावा इसमें रेस्तरां, फैंसी कैबिन, रसोईघर, यहां तक कि स्विमिंग पूल भी है.
अपना रास्ता खोजो! इस नन्हीं-सी कार में बैठो और इस जाल से बाहर आने का रास्ता खोज निकालो.
क्या आप जानते हैं कि ब्रिटेन में वहां की रानी ही एकमात्र व्यक्ति है जिनकी कार पर नंबर प्लेट नहीं होती.
रिक्शा का आविष्कार पूर्व में नहीं बल्कि पश्चिम में हुआ था. पहला रिक्शा सन् १८६९ में जोनाथन स्कोबी नामक अमरीकी ने अपनी बीमार पत्नी के लिए बनाया था. उस रिक्शा पर वह अपनी पत्नी को जापान घुमाने ले गया था.
HTA 7326
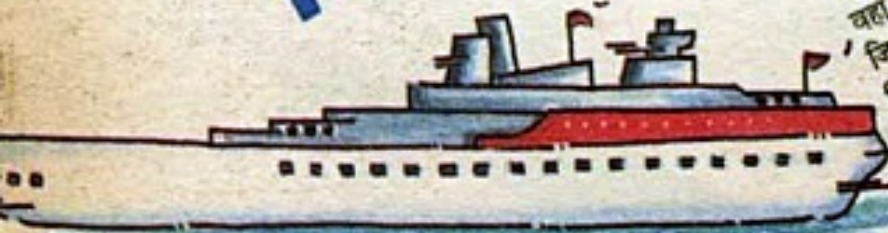
बताओ तो होवरक्राफ्ट क्या होता है? यह दरअसल एक उड़न-जहाज़ है जो पानी के थोड़ा ही ऊपर हवा की तह पर चलता है पर इसकी गति साधारण जहाज़ से कहीं अधिक होती है.
पहला हवाईजहाज आज से कोई एक सदी पहले बनाया था, राइट बंधुओं ने. आज जम्बो जेट (बोइंग 747, जो संसार का सबसे बड़ा हवाई-जहाज है.) का विंगस्पैन ही राइट बंधुओं की पहली उड़ान से काफ़ी बड़ा है.
यातायात के साधनों के इतिहास में कॉन्कॉर्ड का अविष्कार एक बेमिसाल धमाका है. आवाज़ से भी तेज़ रफ्तार यह हवाई-जहाज अपने यात्रियों को २,१७० कि.मी. प्रति घंटे की अद्‌भुत गति से उनकी मंज़िल की ओर ले जाता है.
यह तब की बात है जब भाप का इंजिन नहीं बना था. तब लोग या तो पैदल चलते थे या घोड़ागाड़ी पर. हां, कुछ साहसी लोग जहाज़ों में भी समुद्र-यात्रा पर निकल पड़ते पर ये सफ़र बड़े कठिन और उबाऊ होते थे.
तभी यातायात की दुनिया में आये – जेम्स वॉट और सन् १७६९ में उनका भाप का इंजिन पटरियों पर दौड़ पड़ा. इसके बाद जॉर्ज स्टीफनसन नामक ब्रिटिश व्यक्ति ने पहली रेलगाड़ी बनायी जिसकी गति ४६ कि.मी. प्रति घंटा थी. देखते ही देखते दुनिया भर में रेलें दौड़ने लगीं क्योंकि यह यात्रा करने का सबसे सस्ता और सुगम साधन है. आज फ्रांस में हाइ-स्पीड टीवीजी ट्रेन तो ३८० कि.मी. प्रति घंटा की तूफ़ानी गति से दौड़ती है.
और पहली कार? जी हां, वह ऐसी ही दिखायी देती थी. भाप से चलने वाली उस कार की गति ५ कि.मी. प्रति घंटा थी. किंतु जिसे सही अर्थों में कार कहा जा सके ऐसी कार बनायी सन् १८८५ में डेमलर ने और सन् १८८६ में बेंज़ ने. ये कारें पेट्रोल से चलती थीं.
Parry's
THE KING OF SWEETS
हमारा नया पैरीज़ पेज पसंद आया?
तो हमें खत जरूर लिखिए – पता है- पैरीज़, द किंग ऑफ़ स्वीट्स,
पो.ऑ. बॉक्स २०४०, मद्रास-६०० ००१.
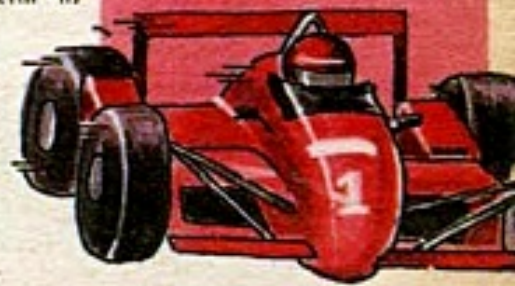
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

वर्ण व धार्मिक विद्वेष

मध्यप्रदेश, तमिळनाडु तथा देश के कुछ अन्य प्रदेशों में भी हाल ही में वर्ण व धार्मिक विद्वेष दावानल की भाँति फैल गये हैं और उन्होंने हमारे देश में दुरवस्था पैदा की है।

वास्तवत: मनुष्य की मानवता को बढावा देने के लिये धर्म स्थापित हुए, आज वे ही धर्म आक्रोश में बदल कर एक मानव के द्वारा दूसरे मानव की हत्या करने की जंगली प्रवृत्ति को उकसा रहे हैं। प्रकृति के प्राणप्रद तत्त्व धूप, वर्षा, वायु, चांदनी इत्यादि मनुष्यों के बीच कोई तर-तम भाव या जाति, वर्ण और धर्म के भेदभाव नहीं करते! लेकिन इस सृष्टि के सृजनकर्ता का मुकुट-मणि मानव, वर्ण एवम् धार्मिक विद्वेषों का अनावश्यक ही शिकार होता जा रहा है, यह बात अत्यन्त शोचनीय है!

आज देशरूपी वृक्ष की जड़ को वर्ण और धार्मिक तत्त्व रूपी कीड़े कुरेदने का प्रयास कर रहे हैं!

वर्ण व धार्मिक विद्वेषों को जड़ से उखाड़कर मानव–धर्म की सुगन्ध फैलानेवाले सर्व-मानव-समता तथा विश्व-कल्याण के हेतु कार्य करना– हम सब भावी भारत के नागरिकों का कर्तव्य है।

वर्ष : ४२ दिसम्बर १९८९ अंक : ४
एक प्रति : ३-०० :: वार्षिक चन्दा : ३६-००

देखें आप कितने होशियार हैं...

ये कॅम्लिन पेंसिल हर दिन आपके साथ स्कूल जाते जाते छोटी हो गयी है!

अब! क्या आप इस कागज़ पर ही कुछ देर और इस्तेमाल करके इसी पेंसिल को लम्बा बना सकते हैं?

आपके पास २० मिनट का वक्त है सोचने के लिए.

यदि बात समझ में आ गई हो तो यही पहेली डैडी या अंकल से पूछ डालिए.
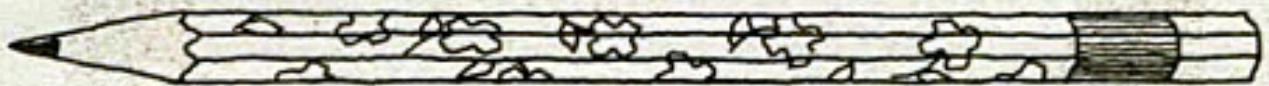
यदि समझ न आया हो तो कुछ देर ताज़ी हवा खा आइए फिर कोशिश कीजिए.

कॅम्लिन फ्लोरा पेन्सिल

समझदार बच्चों के लिए.

जवाब: एक मंजे हुए कलाकार की तरह पेंसिल का उपयोग कीजिए और इससे छोटी पेंसिल बनाकर इस पेंसिल को उसके पास लगा दीजिए. अब बताइए क्या यह कागज़ पर की पेंसिल से बड़ी नहीं है?

camlin FLORA® ERASER

camlin FLORA pencils . With Eraser Tip

Avenues CP 22 89

Neptune

व्हायेजर – २ की नीलग्रह की यात्रा

की जिज्ञासा के कारण मानव निरन्तर प्रयत्नशील रहा है । इसके लिये उसने अन्तरिक्ष में अनेक राकेटों का प्रयोग किया । नेप्च्यून ग्रह की विशेषताओं को जानने के लिये अमेरिका ने व्हायेजर - २ का प्रयोग किया, जिसने उस ग्रह-संबन्धी महत्त्वपूर्ण समाचार भेज दिये ।

२० अगस्त, १९७७ को अमेरिका ने अन्तरिक्ष में व्हायेजर - २ को छोडने के बाद

सूर्य को घेरकर पृथ्वी के साथ बुध, गुरु, शुक्र, कुज, शनि, युरेनस, नेप्च्यून, प्लूटो ग्रह और इन्हीं के साथ अन्य अनेक उपग्रह परिभ्रमण करते रहते हैं। इसी को सौर-कुटुम्ब या सौर-परिवार कहा जाता है। यह बात हम अच्छी तरह जानते है, कि सौर परिवार का केन्द्र सूर्यगोल है।

अपने चारों ओर व्याप्त वायुमण्डल के साथ ग्रहों के भीतर की स्थिति को जानने बारह वर्ष तक निरन्तर ४.४३ लाख करोड (बिलियन) मीलों की यात्रा करके वह नेप्च्यून की सीमा तक पहुँचा। सूर्य से २८० करोड मीलों की दूरी पर स्थित नीले रंग का नेप्च्यून ग्रह अत्यन्त सुन्दर दिखता है। व्हायेजर-२ के द्वारा भेजे गये फोटो से यह विदित होता है कि, नेप्च्यून ग्रह के चारों तरफ ५ वृत्त हैं और उन में से तीन वृत्त अत्यन्त पतले हैं। इस ग्रह के ऊपरी तल

Earth

Saturn

Mercury

Sun

पर ४०० मील प्रति घण्टे की गति से तूफ़ानी हवाएँ चलती रहती हैं।

नेप्च्यून ग्रह के गिर्द चाँद जैसे उपग्रह भ्रमण कर रहे हैं। उन में परिमाण में हमारे चाँद से भी बहुत छोटा दिखाई देनेवाला 'ट्रिटास' नामक चाँद अत्यंत मनोहर लगता है। माना जाता है कि, इसके भीतर केवल बर्फ भरी होगी।

व्हायेजर-२ के द्वारा भेजे गये समाचारों के आधारपर नेप्च्यून ग्रह के सम्बन्ध में, तथा सौर-परिवार के सम्बन्ध में कुछ और नयीं बातों को प्रकाश में लानेके लिये विज्ञान-शास्त्रज्ञ प्रयत्नशील हैं।

धूर्त व्यापारी

एक जमीन्दारी गाँव शहाबाद में भूपति नाम का एक किसान रहता था। उसके गजपति नाम का एक पुत्र था। खेतीबाड़ी के कामों में गजपति को कोई दिलचस्पी नहीं थी। यह बात अच्छी तरह मालूम होने के कारण अपनी मृत्यु के पहले भूपति ने अपने पुत्र और उसके मामा नागराज को समीप बुलाकर हिदायत दी।—

गजपति अपने पिताकी ज़मीन-जायदाद भोग तो सकता है, मगर उसे बेचने का अधिकार नहीं रख सकता।

भूपति की मृत्यु के बाद लगातार दो साल खेतों में कोई फ़सल नहीं हुई। इसके बाद आँधी-तूफ़ान और मूसलाधार वर्षा के कारण गजपति का मवेशीखाना टूट गया और सारे जानवर बाढ़ में बह गये। नये मवेशी, बीज, खाद खरीदने व मज़दूरों की रोज़ी देने के लिये उसके पास पैसा भी नहीं था; इसलिये पड़ोस गाँव में रहनेवाले अपने मामा के पास जाकर उसने थोड़ा धन माँगा।

नागराज ने इस पर उसे सलाह दी, "अरे भानजे, आजकल खेतीबाड़ी में रखा ही क्या है? समयपर बारिश नहीं होती और फ़सल हाथ नहीं लगती है। मुझ से पूछो तो मैं कहूँगा कि, इससे व्यापार करना ही अच्छा है। तुम कोई व्यापार शुरू करो तो कई लाख कमा सकते हो।"

"मामाजी, मेरे मन में भी कुछ ऐसा ही विचार उपजा है। लेकिन व्यापार शुरू करने के लिये कुछ पूँजी तो चाहिये न? अब क्या करूँ मैं?" गजपति निराशा भरे स्वर में बोल उठा।

"ऐसा सोचना तो निरी मूर्खता है तुम्हारी भानजे। तुम क्या सोचते हो, कि सब लोग अपनी पूँजी लगाकर व्यापार करते हैं? अधिकांश लोग तो उधार लेकर ही शुरुआत

कुसुम मुरारका
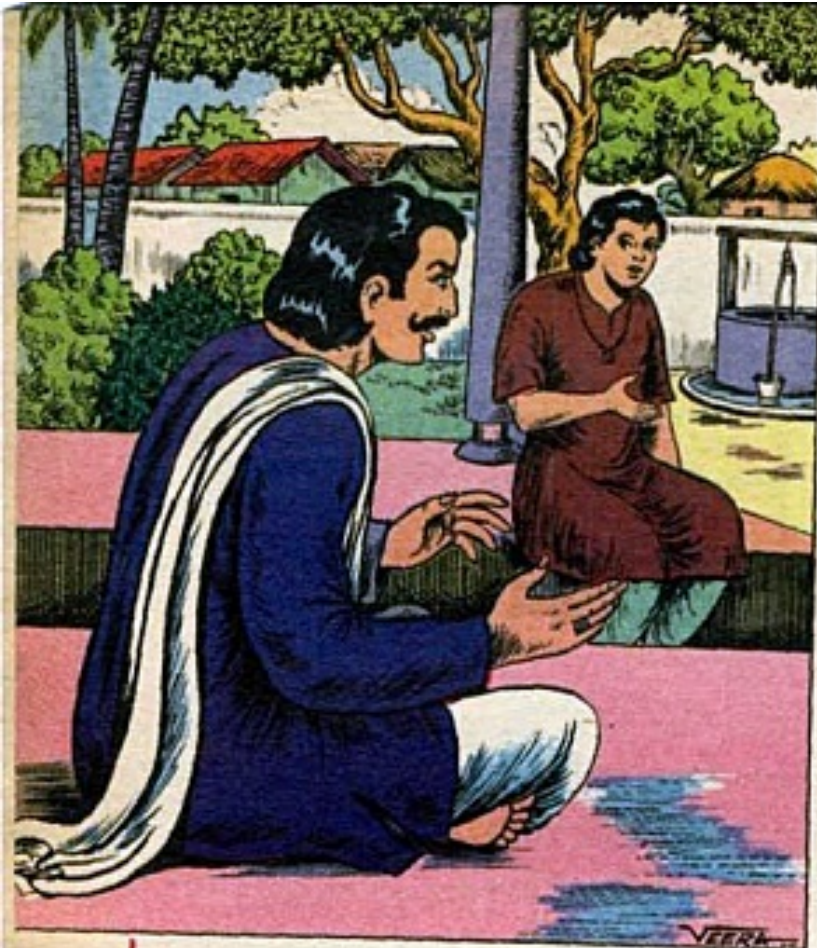
करते हैं व्यापारकी!" नागराज ने सलाह दी ।

"वैसे व्यापार करने का मेरा कोई अनुभव तो है नहीं! बदकिस्मति से उस में अगर नुकसान हुआ तो? अपना ही धन होता तो कोई हर्ज़ नहीं, मगर उधार का धन चुकाया जाये, तो कैसे?" गजपति ने मामा से पूछा ।

"उधार न चुकाया जाये तो क्या होगा?" भानजे का प्रश्न दुहराकर मामा हँसने लगा ।

"हाँ, उधार न चुकाने से ऋणदाता क्या चुप रहेंगे?" आश्चर्य में आकर गजपति ने पूछ लिया ।

"चुप न रहेंगे, तो क्या फाँसी लगाएँगे? ज़मीन जायदाद भले तुम्हारे नाम पर हो, तुम्हें उसे बेचने का हक तो है नहीं! इसलिये ऋणदाता तुम्हारी ज़मीन-जायदाद पर कब्ज़ा नहीं कर सकते ।" नागराज ने समझाया ।

अब जाकर नागराज की बातों का उद्देश्य गजपति की समझ में आया ।

इसके बाद एक महीने के भीतर ही गजपति ने गाँव के साहूकारों से लगभग एक लाख रुपयों का कर्ज़ा लिया और अपना व्यापार शुरू किया । गजपति घर, खेत व जायदाद का मालिक था, इसलिये साहूकारों ने बिना हिचकिचाहट उसे पैसा दिया था ।

गजपति अब किसानों से धान खरीदता और गड़ियों पर लाद कर शहर के व्यापारियों के हाथ बेच देता । और उन्हीं पैसों से शहर से इमली, तेल जैसी आवश्यक चीज़ें खरीद कर गाँव में लाकर बेच देता । व्यापार में उसे दस हज़ार रुपये फायदा हुआ ।

मगर गजपति इससे संतुष्ट नहीं रहा । एक साथ इतना धन प्राप्त होते देख, उसका लालच बढ़ गया । वह सोचने लगा कि इस व्यापार में इस प्रकार हर साल दस-दस हज़ार रुपयों का मुनाफ़ा होता रहे, तो भी उधार चुकाने में कम से कम दस वर्ष लग ही जायेंगे । उसके दस वर्ष बाद ही वह एक लाख रुपये बचा सकता है । इसका मतलब है कि, उसके लखपति होने में बीस साल लग जायेंगे ।

इस प्रकार हिसाब करके गजपति मन ही मन नाराज़ रहने लगा । अब व्यापार में नुकसान होने की बात कहकर साहूकारों को धोखा देकर कुछ ही क्षणों में लखपति बनने का निश्चय उसने किया । उसके मन में यह

दृढविश्वास बना हुआ था कि चूँकि ज़मीन जायदाद बेचने का उसे हक़ नहीं है, उसका कोई कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता ।

गजपति ने एक लाख रुपये अपने मामा के घर छिपा रखे और सर्वत्र यह कहने लगा कि व्यापार में उसका बड़ा नुकसान हो गया है, साहूकारों के कानों में जब यह बात पहुँची, तब उन लोगों ने दरियाफ़्त करके यह जान लिया, कि उसको ज़मीन जायदाद बेचने का हक़ नहीं है। उन्होंने विवश होकर ज़मीनदार के पास जाकर अपनी फ़रियाद पेश की ।

ज़मीनदार रामनारायण सही ढंग से इन्साफ़ करके फैसला सुनाने में प्रसिद्ध था । उसने अपने नौकरों को भेजकर गजपति के व्यापार के संबन्ध में समाचार मँगवाया । उस जानकारी के आधार पर उसने जान लिया कि गजपति का व्यापार में कोई नुकसान होने की संभावना बिलकुल नहीं थी, क्यों कि शहर के किसी भी व्यापारी ने उसे धोखा नहीं दिया था ।

एक दिन ज़मीनदार ने गजपति तथा उसके ऋणदाताओं को बुलवाकर गजपति से पूछा, "क्या यह बात सच है कि तुमने इन साहूकारों से एक लाख रुपये उधार लिये हैं?"

"हाँ हूज़ूर, बात सच है । ऋण-पत्र भी इन साहूकारों के पास हैं ।" गजपति ने उत्तर दिया ।

"क्या तुम्हें व्यापार में नुकसान हुआ है?" ज़मीनदार ने फिर एक बार उससे पूछा ।

"व्यापार में मेरा कोई अनुभव नहीं है, इसीलिये मेरा नुकसान हुआ है ।" गजपति ने अपनी ओर से सफ़ाई देते हुए कहा ।

"साहूकारों ने यह सोचकर तुम्हें कर्ज़ दिया है, कि तुम्हारे पास काफ़ी ज़मीन-जायदाद है; यह बात भी सच है न?" ज़मीनदार ने पूछा ।

"हाँ, बात सच ही है कि मेरे पास काफी ज़मीन जायदाद है ।" गजपति ने बात कबूल करते हुए कहा ।

"फिर तो तुम अपनी ज़मीन वगैरह बेचकर इन की रकम चुका दो ।" ज़मीनदार ने क्रोधभरी आवाज़ में गजपति को आदेश दिया ।

गजपति काँपता हुआ बोला, "मगर महानुभाव, मेरे पिताजी ने ऐसी वसीयत लिख

रखी है, कि मैं किसी भी हालत में अपनी जायदाद बेच नहीं सकता । केवल उसका उपभोग ले सकता हूँ ।" यह कहकर उसने ज़मीनदार को वसीयत के कागज़ात दिखाये ।

ज़मीनदार ने उन पत्रों को बारीकी से देख लिया और उन्हें फिर गजपति के हाथ सौंपते हुए कहा, "देखो गजपति, तुम्हारा कहना तो सच ही है, मैं मान लेता हूँ । मगर तुम्हें अपने खेत व मकानों को भाडेपर देने का हक़ ज़रूर है । ऋणदाताओं के हाथ तुम्हारी संपत्ति सौंप दो । सौ साल बाद यह संपत्ति तुम्हारे वारिसों को वापस मिल जाएगी ।"

ज़मीनदार का फैसला सुनकर गजपति घबड़ाते हुए बोला, "महाराज, मेरी सारी ज़मीन जायदाद मिलकर कम से कम दस लाख रुपयों की तो होगी ही । एक लाख रुपयों के ऋण के लिये इतनी सारी संपत्ति उनके हाथ कर देना कहाँ तक न्याय-संगत होगा?"

इस पर ज़मीनदार ने मुस्कुराते हुए कहा-"एक लाख रुपये उधार लेकर ऋणदाताओं को न चुकाना भी तो अन्याय ही है न? तुम्हें जायदाद बेचने का अधिकार नहीं है, इस लिए कोई तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता-यह सोच कर तुमने यह चाल चली । क्या तुमने किसी की सलाह से यह सब कुछ किया?"

आँखों में आँसू भर कर गजपति ने कहा-"हुजूर, अपने मामा की सलाह मानकर मैंने यह ग़लती की ।" फिर उसने ज़मीनदार को सारी हक़ीकत सुना दी ।

ज़मीनदार के गजपति के मामा नागराज को बुलाकर डाँटा-"तुम उम्र में बड़े हो । फिर भी अपने भानजे को ग़लत सलाह देकर तुमने उसे दगाबाज़ बना दिया । कर्ज़ देनेवालों को तुरन्त उनका पैसा दे दो । तुम लोगों का यह पहला ही अपराध है, इस लिए तुमको और तुम्हारे भानजे को सज़ा दिये बगैर छोड़ देता हूँ । समझे?"

गजपति ने अपने मामा के घर में जो धन छिपा रखा था, उसे लाकर साहूकारों का कर्ज़ चुकाया । पर इसके बावजूद भी गजपति और उसके मामा दोनों दगाबाज़ों के रूप में जनता के दिलों में बस कर ही रह गये ।

३

[सुमेध राज्य के शान्तिप्रिय राजा शान्तिदेव, उनकी पत्नी और दो वर्षीय राजकुमार का अन्त करने के लिये सेनापति वीरसिंह अपने सहचरों की मदद से षड्यन्त्र रचता है। यह समाचार मिलते ही राजा अपनी रानी व राजकुमार को गुप्त सुरंगमार्ग से बाहर भेज देता है। बाद में खुद राजा वीरसिंह के सिपाहियों के साथ अकेले लड़ते हुए नदी में कूद पड़ते हैं। आगे पढ़िये ....]

सीढ़ियों से रानी सुरंग में उतरी और सजल नेत्रों से उसने ऊपर देखा। मगर उसी वक्त राजा ने ऊपर का दरवाज़ा बन्द कर दिया। रानी के मन में टीस उठी कि संभवत: अब वह इस जन्म में राजा को फिर देख नहीं सकेगी। कुछ समय पहले पर्यंत राजदंपति ने अपने दिन बड़े ही आनन्दपूर्वक बिताये थे। ऐसी हालत में क्या कोई कल्पना भी कर सकता था, कि इतने शीघ्र ही ऐसी दु:स्थिति पैदा होगी।

रानी के पीछे जब दरवाज़ा बन्द हुआ, तब उसे लगा कि अब उसके लिये, मानों दुनिया ही बन्द हो गयी! अपनी ज़िंदगी भर में उसने कभी अकेले कोई यात्रा नहीं की थी। राजकुमारी के रूप में जन्म धारण कर, उसने धर्मात्मा शान्तिदेव से विवाह किया और रानी बनकर शान्तिपुर आ पहुँची वह! इस लिए जहाँ भी वह जाती, साथ सखियाँ अवश्य होती थीं।

मौन ही रुदन कर उठी वह! कधे के

आधार से बाल राजकुमार गहरी नीन्द सो गया था । वह जागे नहीं, इस ख़याल से अपने दूसरे हाथ की मशाल सम्हाले वह बड़ी सावधानी से सीढ़ियाँ उतर कर सुरंग में पहुँची थी । केवल दो-तीन गज़ की दूरी ही वह देख सकती थी । उसके आगे तो काजल जैसा अंधकार छाया हुआ था । सुरंग मार्ग चट्टानों में खुदाई करके बनाया गया था । रानी स्वयं जानती थी कि राजमहल तो समतल बनाये गये एक पहाड़ पर स्थित था । इस वक्त वह पहाड़ के भीतरी सुरंग मार्ग में आगे बढ़ रही थी । अब और कितनी दूर चलना है; यह मार्ग उसे कहाँ ले जा रहा है-इन सब बातों से अनभिज्ञ थी वह!

सुरंग अन्दर से कुछ कुछ गीला सा था । हवा भी थमी हुई थी । कोई चीज़ रानी के पैर से टकरा गयी और वह खुद गिरने को हुई । बड़े ही प्रयासपूर्वक उसने अपने को गिरने से बचाया; मगर उस हड़बड़ी में हाथ की मशाल पर पकड़ ढीली होकर वह दूर जा गिरी और बुझ गयी! अब तो रानी को कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या किया जाए । थोड़ी देर वह विमूढ-सी खड़ी रह गई!

थोड़ी ही देर में उसकी आँखें उस अंधकार की अभ्यस्त हो गयी । दूर पर एक विचित्र सी रोशनी ने उसे अपनी ओर आकृष्ट किया । वह फिर उस ओर धीरे धीरे चलने लगी । सुरंग रास्ते की बगल की दीवार में जड़े मणि से वह रोशनी फूट रही थी । सारे मार्ग भर में अत्र-तत्र ऐसे रत्न जड़े हुए थे, जो उसे आगे बढ़ने का रास्ता दिखा रहे थे ।

इतने में कुमार जाग उठा—शायद वहाँ की थमी हवा के कारण! उसको अपने वस्त्र से पंखा झलते हुए और बीच बीच में थपकियाँ देकर सुलाते हुए रानी तेज़ी से आगे चलने लगी । मगर धीरे धीरे वह भी थक गयी । एक एक कदम बढ़ाना भी उसे दूभर हो रहा था । फिर भी अपनी आंतरिक शक्ति को दाँव पर लगाती हुई सुरंग मार्ग से बाहर निकल जाने की लगन से साँस रोके वह चलती रहीं । उसके मन की अवस्था बड़ी विचित्र थी । भविष्य में क्या है कुछ पता न था । बस चल रही थी ।

आखिर वह सुरंग के दूसरे छोर पर पहुँची । राजा की बतायी बातें घबड़ाहट में

वह भूल गयी थी । कुछ कुछ धुँधला सा याद था । अब बाहर जाने का मार्ग!सामने जो दीवार आड़ी खड़ी थी उसके बीच एक चमकदार पत्थर जड़ा हुआ था । अपनी बचीखुची सारी शक्ति लगाकर उसने बगल की मणि दो तीन बार घुमायी । सामने की दीवार एक ओर हट गयी और एक द्वार खुल गया । उस द्वार से रानी बाहर निकली तो उसको एक और विशाल सुरंग दिखाई दिया । उसमें थोड़ी दूर और आगे बढ़ते ही वह एक विशाल जंगल के बीच पहुँच गयी । वह सोचने लगी अब इस जंगल में किन मुसीबतों का सामना करना है कौन जाने? खूँखार जानवर यहाँ अवश्य ही होंगे । वह भगवान की प्रार्थना करने लगी ।

चाँदनी छिटक रही थी; सारा जंगल शान्त और गंभीर था । रानी ने ठंडी हवा में एक गहरी साँस ली । बच्चा भी पुन: शान्ति से सो गया । रानी को यह बड़ा ही अच्छा लगा, क्यों कि वह अगर रोता, उसे सुन कर कोई खूँख्वार जानवर वहाँ आ सकता था । रानी को बड़ी प्यास लगी हुई थी । मगर उस अर्धरात्रि के समय जंगल में पानी की खोज कहाँ की जाय? ऐसी ही प्यासी अवस्था में उसने चारो तरफ़ देखा । कोई झरना या जलाशय उसे दिखाई न दिया । कुछ देर तक वह खड़ी रह गई । उसके मन में तरह-तरह के विचार उठ रहे थे

उसको दूर से सियारों की आवाज़ें सुनायी दीं । रानी ने सोचा शायद सबेरा होने को है । राजकुमारको अपनी गोद में लिटाकर वह एक बड़े से पत्थर पर बैठ गयी । थोड़ी देर बाद उसे कहीं से पानी के बहने की ध्वनि सुनायी दी । बच्चे को हरी घास पर लिटाकर वह झरने का पानी पी आयी । आते वक्त वह अपना आँचल पानी में भिगो कर लायी थी । थोड़ा सा पानी उसने कुमार के मुँह में निचोड़ा । सहसा कुमार ने पीछे मुड़ कर देखा अबोध बालक को माँ की अवस्था की क्या कल्पना थी? पर वह माँ की तरफ़ मुड़ा । रानी के पास पहुँच कर कुमार उसकी पीठ थपथपाने लगा ।

वह जागकर हँसता हुआ कभी अपनी माँ की ओर, तो कभी अपने चतुर्दिक नये वातावरण की ओर विस्मयपूर्वक देखता

रहा । पूर्वी दिशा में अरुणोदय हो रहा था; चारों ओर पक्षियों की कलरव प्रारंभ हो गयी । कुमार अपनी माँ की गोद से उतर कर प्रकृति के मुक्त वातावरण पर मुग्ध हो ठुमक-ठुमक चलता हुआ आगे बढ़ा । "बेटे आगे मत जाओ ।" रानी ने पुकारा ।

रानी की ओर एक बार मुड़ कर देखा कुमार ने; और मुस्कुराकर वह फिर आगे बढ़ा । रानी उठ कर खड़ी हो गयी और बच्चे को लिये जैसे ही उसने आगे कदम बढ़ाया, कमज़ोरी के कारण वह खड़ी न रह पाकर, वहीं बेहोश होकर गिर पड़ी ।

"आगे मत जाओ बेटे, मत जाओ ।" बस, रानी इतना ही बोल पायी; उस के मुँह से और शब्द न फूटे ।

जंगल में रहनेवाला जयानन्द नाम का मुनि हमेशा जैसे, सूर्योदय के पूर्व ही समीप के झरने के पानी से स्नान करने निकल पड़ा । उस समय एक शिशु की किलकारी सुनकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ । मुनि ने चारों तरफ नज़र दौड़ायी, तो उसे समीप ही प्रसन्नता से हँसता हुआ एक शिशु दिखाई दिया । मुनि यह सोचता उस के समीप पहुँचा, कि न मालूम कोई दिव्य शिशु स्वर्ग से पृथ्वी पर उतर आया हो ।

उस सुन्दर शिशु ने मुस्कुराते हुए अपने हाथ इस प्रकार ऊपर उठाये, मानो वह अपने को गोद में उठा लेने का संकेत कर रहा हो । मुनि ने बड़े प्यार से उसे अपनी बाहों में उठा लिया । शिशु के कण्ठ में एक स्वर्णहार पड़ा था । हार के बीच एक बड़ा सा पदक था, जिस पर एक कमलपुष्प को अपनी सूँड से उठाये हुए हाथी का चित्र अंकित था । उसे देख मुनि ने पहचान लिया कि यह राजपरिवार से संबंधित मुद्रा है ।

शिशु ने पश्चिमी दिशा की ओर संकेत किया और फिर माँ की गोद से उतर कर चलने लगा । मुनि भी उसके पीछे चल पड़ा ।

घनी व हरी घास पर रानी बेहोश पड़ी थी । झरने से पानी लाकर मुनि ने उसके चेहरे पर छिटक दिया । रानी ने आँखें खोल कर उठ बैठने का प्रयास किया, मगर वह संभव न हुआ । पर रानी अब होश में आई थीं । उसने साधु की ओर देखा ।

"बेटी, कौन हो तुम?" मुनि ने रानी के

चेहरे पर झुककर पूछा ।

"आप ने मुझे बेटी पुकारा! अपनी पुत्री ही मान लीजिये मुझे । साक्षात् भगवान ने ही आप को यहाँ भेज दिया है । मैं इस राज्य की अभागिनी रानी हूँ । अर्धरात्रि के समय शत्रु ने राजमहल को घेर लिया । मेरे पति ने मुझे आदेश दिया, कि मैं युवराज को लेकर वहाँ से बच निकलूँ ।" रानी ने विकल होकर कहा ।

"कल युवराज की जन्म गाँठ थी न?" मुनि ने रानी से पूछा ।

"जी हाँ महात्मन्! शत्रु ने हमारे पुत्र के जन्म-दिन के उत्सव को ही अपने लिये एक मौका बना लिया ।" रानी बड़ी कठिनता से एक शब्द बोल रही थी । उसे अब साँस लेने में भी बड़ी तक्लीफ़ हो रही थी ।

"ओह! ऐसी बात है? मैं समझ गया, अब कुछ मत बोलो । तुम बहुत कमज़ोर हो गयी हो बेटी ।" मुनि ने कहा ।

रानी ने एक विषादपूर्ण हँसी हँस दी । "मेरे मन में तो डर है कि संभवतः मुझे इसके बाद बोलने का मौका ही न मिले । मैं यही सोच रही हूँ, कि भगवान ने आप के द्वारा मेरे पुत्र की रक्षा की है । अब मैं किसी प्रकार की व्यथा या भय के बिना बड़ी संतुष्टिपूर्वक अपनी आँखें बन्द कर लेती हूँ । और अगर मुझे यह समाचार भी मिले, कि महाराज सकुशल हैं, तो और भी निश्चिन्त हो, सदा के लिये मेरी आँखें बन्द हो जायें ।" रानी ने कहा ।

"बेटी, अगर भगवान का अनुग्रह न होता, तो क्या मैं इस वक्त यहाँ पहुँच गया होता? हम लोग करुणा स्वरूप भगवान की प्रार्थना करें, कि वे राजा की रक्षा करें । इस वक्त तो हम और कुछ कर भी क्या सकते हैं? सब ईश्वर की ही कृपा है ।" मुनि ने कहा ।

रानी नीरस हँसी हँस पड़ी । उसके अधरों से मुस्कुराहट मिटने से पहले ही उसकी आँखें सदा के लिये मूँद गयीं । मुनि ने रानी की नाड़ी की जाँच करके जान लिया कि ये आँखें अब सदा के लिये मुँदी ही रहेंगी ।

(क्रमशः)

स्वावलंबन

दृढ़व्रती विक्रमार्क वृक्ष के पास लौट आये, वृक्ष से शव को उतारा, और उसे कंधे पर डाल कर हमेशा की तरह मौन श्मशान की ओर बढ़ने लगे। इस पर शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा – "राजन्, आप एक विशाल देश के महाराजा होकर भी इस मध्य-रात्री के समय इस भयानक श्मशान में घूम रहे हैं, यह देख मुझे आप पर दया आती है। यह प्रश्न कुछ महत्त्वपूर्ण नहीं है, कि आपको इस कार्य में प्रोत्साहन देनेवाला कोई साधारण व्यक्ति है, अथवा कोई बुद्धिशाली है, या सर्वस्व को त्याग कर बन में तप करनेवाला कोई महामुनि है? जो व्यक्ति आप को कोई एक कार्य करनेके लिए प्रवृत्त करता है, वही आप को विजय के पथ पर एक एक सीढ़ी चढ़ते देख आप से ईर्ष्या भी करने लगता है। मैं आपको ऐसी ही एक कहानी सुनाता हूँ। प्राचीन काल में सदानन्द नामक एक मुनि ने विक्रम नामक एक व्यक्ति के साथ

बेताल कथा

बड़ा विचित्र व्यवहार किया । यह कहानी सुन कर आप अपने इन परिश्रमों को भी थोड़ी देर के लिए भूल जाएँगे ।

"मयूरी नामक राज्य में एक छोटा-सा गाँव था कांतिपुर । उस गाँव में धर्मदास नाम का एक किसान रहता था । उसके एक इकलौता पुत्र था विक्रम । विक्रम को पढ़ने-लिखने में रुचि न थी । परंतु माँ जो कहानियाँ सुनाती उसे वह बड़े चाव से सुनता था । माँ की कहानियों को सुनकर विक्रम के मन में पक्का विश्वास जम गया कि जंगल में तपस्या करनेवाले मुनि लोग असाधारण महिमाएँ रखते हैं और उनके पास जाकर मंत्र सीखने से किसी भी कार्य में सफलता मिल सकती है ।

एक दिन धर्मदास ने विक्रम को बुलाया और समझाकर कहा—"बेटा, तुम्हारी उम्र बढ़ती जा रही है । तुम पढ़ाई में कच्चे ही निकले हो । इस लिए आज से खेती-बाड़ी के काम में तुम मेरी मदद करो । कुछ शारीरिक मेहनत का काम करोगे तो तुम्हारी तरक्की हो सकती है । और कुछ काम तो तुम कर नहीं सकोगे, खेती-बाड़ी काम अपना घर का काम है । जाओ, आज भेड़ों को तुम चरा लाओ ।"

विक्रम भेड़ों को लिये जंगल में घास के मैदान तक चला गया और भेड़ों को चरने के लिए जंगल में घास के मैदान तक चला गया और भेड़ों को चरने के लिए छोड़ कर खुद एक पेड़ के नीचे सो गया । नींद से जाग पड़ा तो देखा कि भेड़ें गायब हैं । उसे बड़ी चिन्ता हुई कि अब क्या किया जाय । घर जाकर पिताजी को क्या बताएँ? चलो, भेड़ें कहाँ गई हैं, उनको ढूँढ़ना ही चाहिए । भेड़ों की खोज में वह जंगल में थोड़ी दूर आगे निकल गया । एक स्थान पर एक बड़े वृक्ष के नीचे एक मुनि तपस्या करता दिखाई पड़ा । उस मुनि का नाम था सदानन्द । विक्रम का ध्यान अनायास उस मुनि की ओर आकृष्ट हुआ । मुनि से कुछ मार्ग-दर्शन पाने के लिए वह वहीं रुक गया ।

मुनि आँखें बन्द किये ध्यान में मग्न था । विक्रम जाकर उसके सामने बैठ गया । मुनि ने आँखें खोलीं, तो विक्रम ने बड़े भक्ति-भाव से उसे प्रणाम किया ।

मुनि ने मुस्कुराते हुए विक्रम से पूछा–"बेटा, खूँखार जानवरों से भरे इस जंगल में किस लिए आ गये हो? किसी मुसीबत में फँस गये हो क्या? अगर हो सके तो मैं तुम्हारी मदद करूँगा। बिना डर के बता दो तुम्हारी मुसीबत।"

विक्रम ने जवाब दिया–"महात्मन्, मैदान में चरनेवाली मेरी भेड़ें कहीं खो गई हैं। उनकी खोज में यहाँ तक चला आया। बहुत ढूँढ़ने पर भी भेड़ें मिल नहीं रही हैं। अब घर जाकर पिताजी को क्या मुँह दिखाऊँ आप ही कुछ उपाय बता दीजिए। मैं आपका कृतज्ञ रहूँगा।"

मुनि ने पल भर आँखें मूँद लीं और फिर आँखें खोल कर कहा–"तुम जब सो रहे थे, तब तुम्हारी सारी भेड़ें घर पर सुरक्षित पहुँच गई हैं। चिन्ता मत करना। अंधेरा होने को है। जंगली जानवरों से तुम्हें ख़तरा न हो, इस लिए मैं तुम्हें यह रुद्राक्ष-माला देता हूँ। तुम निर्भय होकर अपने घर पहुँच जाओ। यह माला तुम्हारे पास होगी तो कोई जंगली जानवर तुम्हारा बाल बाँका न करेगा। तुम अपने रास्ते सीधे पूर्व दिशा में चले जाओ। किसी जंगली जानवर की आवाज़ सुनो तो घबराओ नहीं। वैसे जानवर भी आदमियों से डरते हैं इसका ख्याल रखो।" यह कह कर मुनि ने विक्रम के हाथ में एक रुद्राक्षमाला दे दी।

माला हाथ में लेकर विक्रम ने मुनि से निवेदन किया–"स्वामी, मेरी माँ ने मुझे बताया है कि आप जैसे महामुनियों के पास अनेक प्रकार की महिमाएँ होती हैं। पढ़ाई में तो मेरा मन नहीं लगता। आप अगर कोई मंत्र बता दें, तो उसके सहारे मैं एक महान् व्यक्ति बनना चाहूँगा।"

"वत्स, अगर महान् व्यक्ति बनना चाहते हो तो मंत्र-तंत्र के पचड़े में मत पड़ो। स्वावलंबन सब से अधिक उपयुक्त चीज़ है। तुम पढ़ाई में ज़्यादा ध्यान दो। जंगल में अकेले इतनी दूर तक आये हुए तुम निश्चय ही साहसी युवक हो। जीवन में यश प्राप्त करना तुम्हारे लिए बिलकुल कठिन नहीं है। तुम हट्टे-कट्टे नौजवान हो। हर काम कर सकते हो। पढ़ाई में तुम ने ध्यान नहीं दिया, इस लिए पिछड़ गये। मन लगाकर कोई भी

काम करो, तुम्हें सफलता ज़रूर मिलेगी। मेरे आशीर्वाद हैं तुम्हारे लिए। जाओ।" मुनि ने उपदेश दिया।

मुनि से प्रोत्साहन पाकर उस दिन से विक्रम ने पढ़ाई में खूब मन लगाया। दिन-रात पढ़ाई करके वह अपने अध्यापकों का विश्वासपात्र शिष्य बना। शीघ्र ही विक्रम ने सारे शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर लिया।

एक दिन विक्रम अरण्य में सदानन्द मुनि के पास गया। और निवेदन किया— "स्वामीजी, आप से प्रोत्साहन पाकर मैंने पढ़ाई में दिल लगाया। अनेक शास्त्रों का मैंने अध्ययन किया, फिर भी मुझे संतोष नहीं है। मुझे लगता है, जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए केवल शिक्षा मात्र पर्याप्त नहीं है!"

मुनि ने अपनी संमति देते हुए कहा— "तुम्हारा विचार सही है बेटा। आत्मरक्षा तथा शत्रुओं का सामना करने के लिए तुम्हारा अध्ययन काफ़ी नहीं है। तुम्हें क्षात्र-विद्याएँ भी सीखनी चाहिए। आम्रपाली नगर में एक वीर है, जिसका नाम है ज्वालामुखी; मेरा संदेश लिये तुम उसके पास जाओ। वह तुम्हें सब प्रकार की क्षत्रियोचित विद्याएँ सिखाएगा।" कहते हुए मुनि ने विक्रम को आशीर्वाद दिया।

मुनि का संदेशा लेकर विक्रम आम्रपाली नगर में पहुँचा। ज्वालामुखी के पास रहकर उसने क्रमशः सारी क्षात्र-विद्याओं का अध्ययन किया। उसी समय ज़मीनदार रत्नभूषण ने विक्रम को अपने पास बुला लिया। विक्रम जाकर ज़मीनदार से मिला।
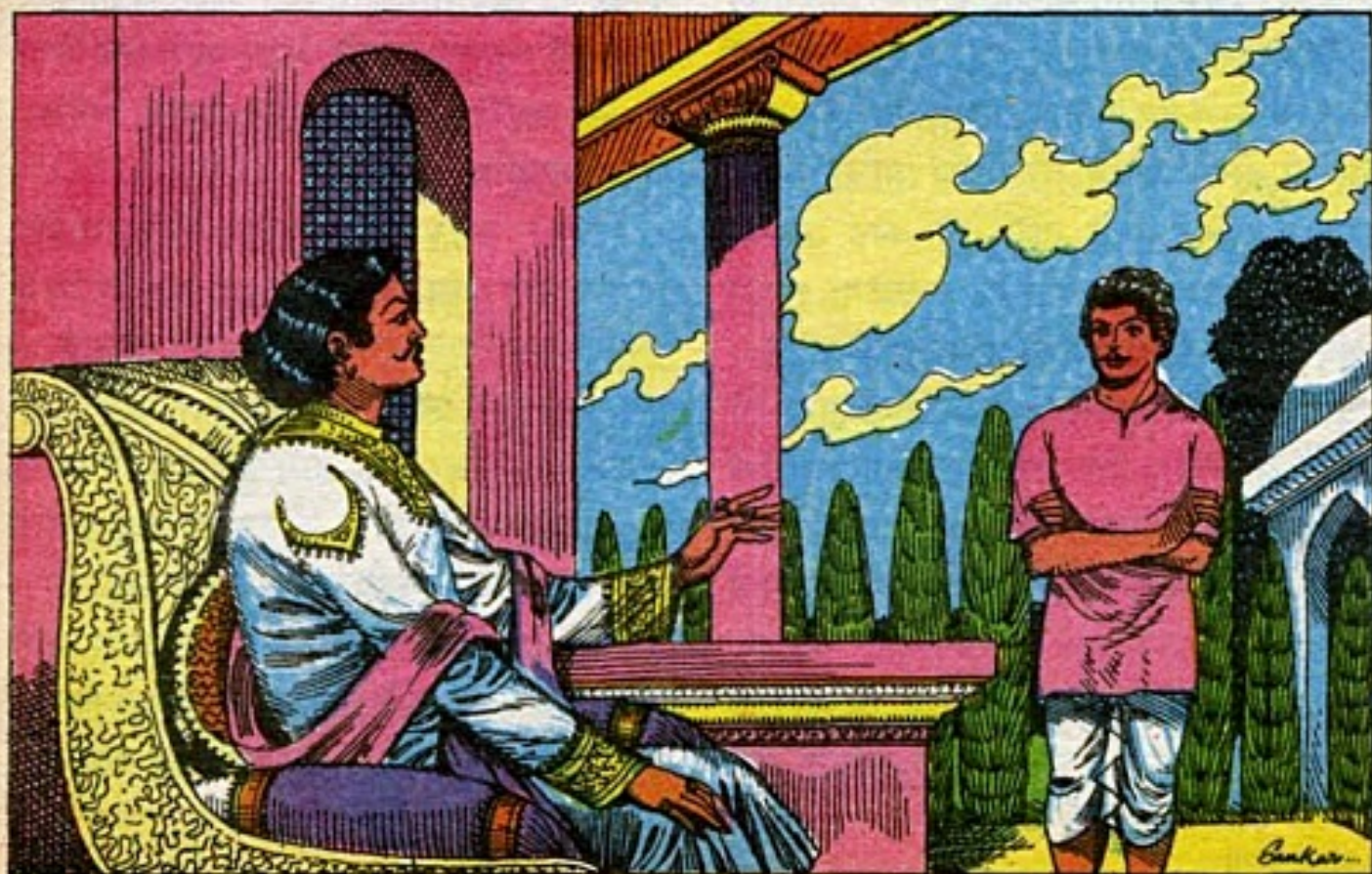
ज़मीनदार ने विक्रम के सामने प्रस्ताव रखा—"विक्रम, ज्वालामुखी के मुँह से मैंने तुम्हारे बारे में सुना है। मैं तुम्हें अपना अंगरक्षक बनाना चाहता हूँ। तुम्हें यह स्वीकार है?"

विक्रम ने स्वीकृति दी। और उसी दिन मुनि सदानंद के पास जाकर सारा वृत्तान्त निवेदन किया और मुनि से पूछा—"स्वामीजी, मैं जानता हूँ कि अंगरक्षक का यह काम मेरे योग्य नहीं है। फिर भी मैंने इसे स्वीकार कर लिया है। मैं सोचता हूँ कि जो अवसर हाथ आया है, उसे क्यों व्यर्थ गँवा दूँ? अंगरक्षक का काम करते हुए किसी और ऊँचे पद के लिए प्रयत्नशील रहूँ! आपसे कुछ मार्गदर्शन की अपेक्षा करूँ?"

सदानन्द मुनि ने कहा—"तुम्हारा विचार उचित ही है। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हें इससे ऊँचे पद की प्राप्ति हो।" इस प्रकार सदानन्द ने विक्रम को प्रोत्साहन दिया।

सुमंत मयूर नगर का मंत्री था। वह रत्नभूषण का घनिष्ट मित्र था। एक दिन वह रत्नभूषण से मिलने आया। बातचीत के दौरान में उसने कहा—"हमारे राज्य की आर्थिक स्थिति कुछ अच्छी नहीं है। ख़ज़ाने में पर्याप्त धन नहीं है। अगर माली हालत को सुधारना है, तो जनता पर अधिक कर लादना अनिवार्य है। लेकिन राजा इसको मानते नहीं है। मेरी समझ में नहीं आता कि क्या करूँ।"

विक्रम ने उनका यह वार्तालाप सुना और उसने नम्रता से सुझाया—"मंत्रीवर, अगर

आप ग़लत न समझें, तो जनता पर कर लादे बगैर ख़ज़ाना भरने का उपाय मैं आप को सुझा सकता हूँ!"

"हाँ हाँ, बताओ तो। क्या है उपाय?" सुमंत ने पूछा।

विक्रम ने कहा–"हमारे राज्य में ऐसे अनेक व्यापारी हैं जो पूर्वी समुद्र के टापुओं तथा हमारे पड़ोसी राज्यों के साथ बड़े पैमाने पर व्यापार करते हैं। आप कृपया इस बात की जाँच कराइए कि वे सब राजा को न्यायोचित कर चुकाते हैं कि नहीं? मैं मानता हूँ, आपकी समस्या अपने आप हल हो जाएगी।"

मंत्री ने रत्नभूषण से कहा–"मित्र, तुम अपने अंगरक्षक को मुझे सौंप दो। यह विक्रम मेरा सलाहकार बन कर रहेगा।" रत्नभूषण ने इसे स्वीकृति दी।

सदानंद मुनि ने सारा वृत्त सुना तो विक्रम से कहा–"अपने बुद्धि-बल के सहारे तुम थोड़े और ऊँचे पद पर पहुँच गए हो, मुझे खुशी है। यह सब स्वावलंबन का फल है! समझे?"

महाराजा मंजीरनाथ की राजसभा में एक दिन दुष्टमुख नाम का एक मांत्रिक पहुँचा और उसने कहा–"महाराज, इस पृथ्वी भर में अत्यंत रूपवती कन्या से विवाह करने का निश्चय करके मैंने अपने इस मंत्र-दर्पण में देखा। आपकी लाड़ली पुत्री स्वयंप्रभा से बढ़कर सौंदर्यवती अन्यत्र कहीं नहीं है। आप चुपचाप उसके साथ मेरा विवाह संपन्न करा दीजिए। जान लीजिए, मेरा सामना कर सकनेवाला वीर इस दुनिया में कोई नहीं है।"

ये बातें सुन कर राजा मंजीरनाथ म्यान से तलवार खींच कर अपने सिंहासन से उठ खड़ा हुआ। विकट अट्टहास करते हुए दुष्टमुख ने अपने हाथ का मंत्र-दण्ड हवा में लहराया। दूसरे ही क्षण राजा मंजीरनाथ का दायाँ हाथ और दायाँ पैर अचेत हो गये। और राजा सिंहासन पर लुढ़क पड़ा।

सभा-भवन में उपस्थित सब लोगों की ओर दुष्टमुख ने आँखें लाल-पीली करके देखा और चुनौती दी–"तुम लोगों में से किसी ने मुझ अगर रोकने का प्रयत्न किया तो उसकी भी वही हालत होगी, जो राजा की हो गई

है ।" और फिर युवरानी स्वयंप्रभा के साथ वह गायब हो गया ।

अब राजा ने घोषणा की—"जो वीर दुष्टमुख का वध करके राजकुमारी को वापस ले आएगा, उसका विवाह राजकुमारी के साथ किया जाएगा और बाद में वह राजा बन जाएगा ।"

विक्रम जंगल में सदानंद मुनि के पास गया और सारा समाचार सुनाकर प्रार्थना की—"महात्मन्, यह मेरे लिए एक अपूर्व अवसर है । आप कृपया मुझे आशीर्वाद दें कि अपने इस प्रयास में सफलता प्राप्त कर सकूँ ।"

मुनि सदानंद ने क्षण भर आँखें मूँद लीं और फिर कहा—"विक्रम, यह कार्य तुम्हारी शक्ति और युक्ति के बाहर का है । दुष्टमुख अत्यन्त मायावी है । कोई वीर उसे पराजित नहीं कर सकता । वह दण्डकारण्य में एक झरने के किनारे अपनी गुफ़ा में रहता है । तुम वहाँ जाकर कोशिश कर सकते हो ।"

विक्रम मांत्रिक की खोज में निकला । कई दिनों की यात्रा के बाद वह मांत्रिक की गुफा के पास पहुँच गया । वह सोचने लगा, उसके दृष्टि-पथ में आए बगैर उसका वध कैसे किया जाए? देर तक सोचनेके बाद उसने धनुष-बाण धारण किया और गुफा के पासवाले एक विशाल वृक्ष के पीछे छिप गया ।

थोड़ी देर में मांत्रिक गुफा से बाहर निकला और झरने की ओर चल पड़ा । उचित अवसर पाकर विक्रम ने एक पैनी धारवाला बाण मांत्रिक के कलेजे पर छोड़ दिया । दूसरे ही क्षण मांत्रिक हाहाकार करता हुआ धरती पर गिर पड़ा और मौत का शिकार हो गया ।

मांत्रिक की मृत्यु के साथ इधर राजा मंजीरनाथ के हाथ-पैर पूर्ववत् ठीक हो गये । विक्रम युवरानी को लेकर राजा के अंतःपुर पहुँचा और उसे राजा के हवाले किया । राजा ने विक्रम के साथ स्वयंप्रभा का विवाह संपन्न कराया तथा उसका राज्याभिषेक करवाया ।

राजगद्दी पर बैठते ही विक्रम ने पड़ोसी राज्यों को पराजित कर चक्रवर्ती बनने का संकल्प किया । अपना यह संकल्प उसने सदानंद मुनि को सुनाया और भक्तिपूर्वक प्रणाम करके कहा—"स्वामीजी, आपने कई

बार मुझे प्रोत्साहित कर एक-एक सीढ़ी पार करने की सलाह दी । अब मैं पड़ोसी राज्यों को जीत कर चक्रवर्ती राजा बनना चाहता हूँ । आपका आशीर्वाद ग्रहण करने आया हूँ ।"

सारा वृत्तान्त सुन कर मुनि ने क्रोध भरे स्वर में कहा—"विक्रम, ऐसा मूर्खतापूर्ण विचार कभी अपने मन में मत लाओ । आज तक तुमने जो प्राप्त किया है, उसमें संतुष्ट रहो ।"

बेताल की कहानी खतम हो गई । अब उसने राजा से पूछा—"राजन्, मुनि ने विक्रम को सीढ़ी-दर-सीढी आगे बढ़ने को प्रोत्साहित किया । उसी मुनि ने विक्रम के चक्रवर्ती बनने के संकल्प को भला क्यों तोड़ दिया? इसका कारण ईर्ष्या और असहनशीलता ही तो है न? एक देश का राजा बनने के बाद मुनि के क्रोधित होने पर विक्रम ने अपना संकल्प क्यों छोड़ दिया? क्या इस डर से कि मुनि अपनी मंत्र-शक्ति के सहारे उसकी हानि कर बैठेगा? इस संदेह का समाधान जानकर भी आप न देंगे तो आपका सिर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा ।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"प्रत्येक व्यक्ति की प्रगति की एक सीमा होती है । उस सीमा से बढ़ कर हुई उन्नति जब दूसरों की हानि के कारणभूत हो जाती है तब उसे प्राप्त उन्नति से संतुष्ट हो जाना चाहिए । विक्रम के चक्रवर्ती बनने के संकल्प के कारण अनेक युद्ध घटित होंगे, जिससे जनता और संपत्ति की अपार हानि होगी । इसी विचार से मुनि ने विक्रम के प्रयत्न को रोक दिया । मुनि के मन में विक्रम के प्रति किसी प्रकार की ईर्ष्या कदापि नहीं है । मुनि के सुझाव में जो सुदुद्देश्य है, उसे विक्रम ने जान लिया और अपने संकल्प को छोड़ दिया । मुनि के मंत्र-शक्ति के प्रति भय का इससे कुछ संबंध नहीं ।"

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः वृक्ष पर जा बैठा ।

(कल्पित)

साधारण मानव और महामानव

रामवर्मा का इकलौता पुत्र था नागवर्मा। वह स्वभाव से अच्छा था, पर बहुत लाड़-प्यार में पलनेके कारण उद्दण्ड बना था। कभी-कभार अपनी ज़बान पर नियंत्रण नहीं रख पाता था।

एक बार एक दूर का रिश्तेदार शूरवर्मा मेहमान बनकर उसके घर आया। वह अपनी कन्या का विवाह नागवर्मा से कराना चाहता था। नागवर्मा को जब यह मालूम हुआ, तब उसने मज़ाक में शूरवर्मा से कहा—"देखिए, मुझे डर है कि तुम्हारी कन्या की रूपरेखाएँ कहीं तुमसे मिलती-जुलती हों-"

इस पर शूरवर्मा ने झट कह दिया-"डरो मत, हम तुम्हारे दूर के रिश्तेदार हैं, नज़दीक के नहीं। मेरी पुत्री में तुम्हारी रूप-रेखाएँ नहीं हैं। तुम्हारी रूप-रेखाएँ न होकर और किसी की रूप-रेखाएँ आ गई हों तो वह सुंदर ही होगी न?"

शूरवर्मा का व्यंग्य जानकर नागवर्मा को गुस्सा आया। उसने तैश में आकर कहा—"अगर मेरे सौंदर्य के बारेमें जानते हो, तो क्यों मुझे ढूँढ़ने आए भला? क्या तुम्हारी खूबसूरत कन्या के लिए और कहीं सुयोग्य वर नहीं मिला?"

नागवर्मा का परिहास सुनकर शूरवर्मा हँस कर बोला—"तुम हमारे दूर के रिश्तेदार हो न? मैं तुम्हारी इतनी-सी भी मदद न करूँ! यह सोचकर मैं इतनी दूर तुम्हारे यहाँ चला आया कि अगर मैं अपनी कन्या का विवाह तुमसे न करूँ तो शायद ही और कोई अपनी लड़की तुमसे ब्याहे!"

अब नागवर्मा का ग़ुस्सा और चढ़ गया। तपाक से वहाँ से उठ कर चला गया। अपनी माँ के पास जाकर कहा—"माँ, अपनी कन्या के लिए वर ढूँढ़ने आए इस महाशय को ऐसा घमण्ड? उनसे कह देना—कुछ भी हो, मैं उनकी कन्या के साथ हर्गिज़ शादी नहीं

करूँगा ।"

माँने नागवर्मा को समझाते हुए कहा—"बेटे, इस समय अगर यह रिश्ता मंजूर नहीं करोगे, तो ऐसा अवसर फिर आनेवाला नहीं । लड़की सचमुच बहुत ही सुंदर है । और फिर शूरवर्मा के पास बहुत धन-संपत्ति भी तो है ।"

"धन-संपत्ति हो तो उनकी अपनी । उससे मुझे क्या मतलब? जिसने मेरा अपमान किया, उसकी बेटी से मैं कभी शादी नहीं करूँगा ।" नागवर्मा बरस पड़ा ।

नागवर्मा की माँ ने लाचार होकर सारी बात अपने पतिदेव को सुनाई । रामवर्मा ने शूरवर्मा को यह समाचार दे दिया ।

नागवर्मा के पास पहुँचकर शूरवर्मा ने पूछा—"मैं जान गया कि तुम ने मेरी पुत्री के साथ विवाह करने से इनकार कर दिया है! क्या मैं इसका कारण भी जान सकता हूँ?"

नागवर्मा ने उत्तर दिया—"तुमने मेरा अपमान किया ।"

"मैंने तुम्हारा अपमान तो नहीं किया । बस, यूँ ही थोड़ा मज़ाक किया । बात मामूली है । अगर सचमुच मैं तुम्हें पसंद न करता तो अपनी लड़की का विवाह तुमसे कराने के विचार से तुम्हारे घर भला क्यों आता?" शूरवर्मा ने अपनी बात कही ।

"ख़ैर, मज़ाक में ही सही, मैं अपना अपमान कदापि नहीं सह सकता!" नागवर्मा ने कड़ा जवाब दे दिया ।

शूरवर्मा ने पूछा—"अगर तुम यों सोचते हो, तो तुमने मेरा अपमान क्यों किया? या तुमने भी मेरे साथ मज़ाक ही किया?"
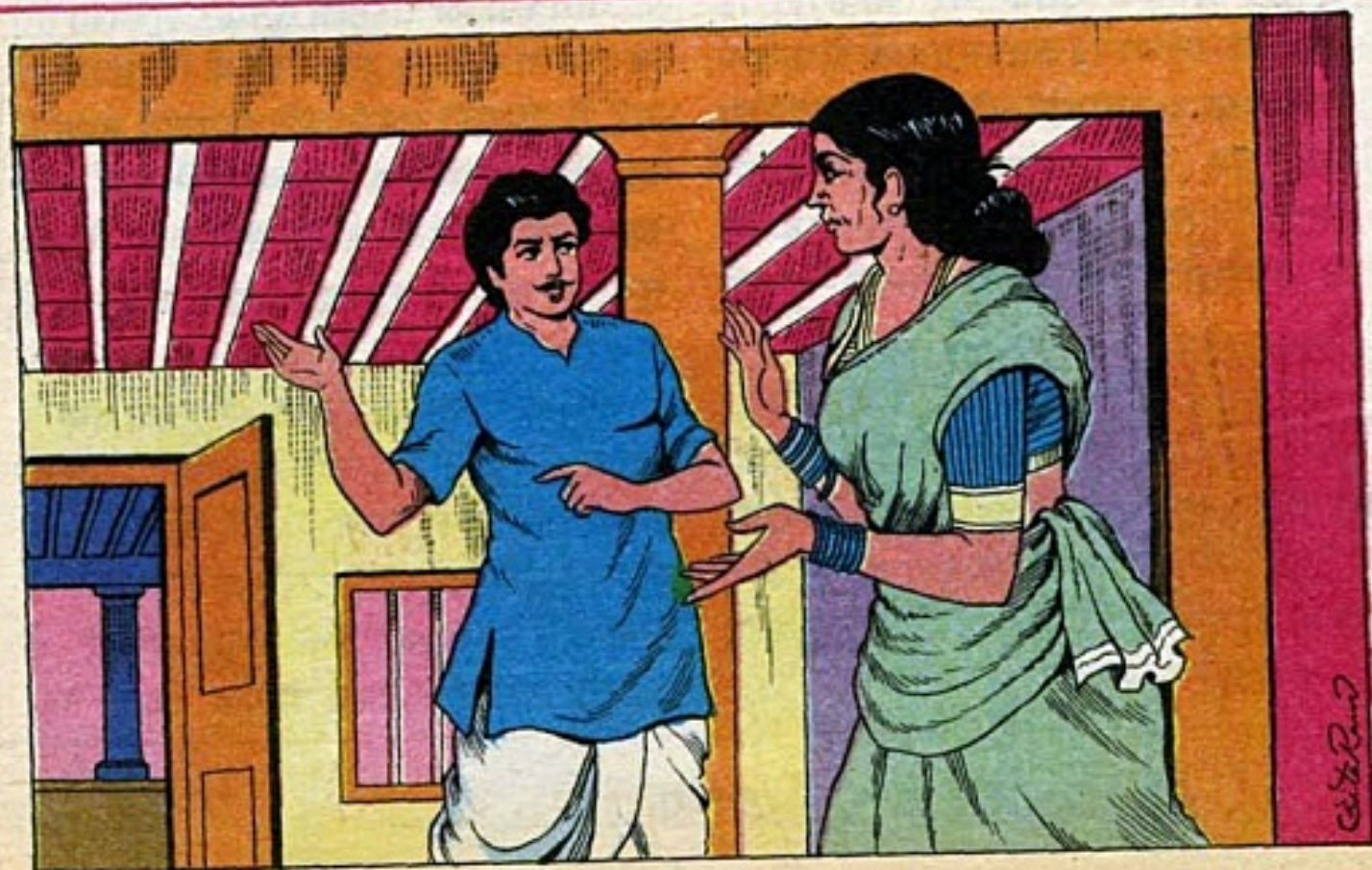
नागवर्मा ने आश्चर्य से पूछा—"मैंने तुम्हारा अपमान कब किया?"

"तुमने यह नहीं कहा था कि मेरी कन्या की रूप-रेखाएँ यदि कहीं मुझसे मिलती-जुलती हों, तो इस बात का तुम्हें डर है। मैं उम्र में तुमसे बड़ा हूँ। जब तुम मेरा मज़ाक उड़ा सकते हो, तो मैं भी तुम्हारा परिहास करूँ तो यह मेरी ग़लती कैसे हो सकती है?" शूरवर्मा ने अपना तर्क पेश किया।

नागवर्मा ने समझाया—"ओह, यह बात है! मैं वह बात कभी भूल गया हूँ। मैं जब कभी शौकिया तौर पर किसी का मज़ाक उड़ाता हूँ, तो उस बात को तुरन्त भूल जाता हूँ। क्योंकि मन-ही-मन कुछ गाँठ में बाँधे बात करने की मेरी प्रकृति नहीं है।"

"तुम शौक से मेरा मज़ाक उड़ाकर उसे भूल गये हो। मैंने भी शौक से तुम्हारा परिहास किया, इस लिए तुम भी उसको इसी क्षण भूल जाओ।" शूरवर्मा ने सुझाया।

नागवर्मा ने हठ के साथ कहा—"अगर कोई छोटी बात भी मेरे दिल पर चोट लगा दे, तो मैं ज़िंदगी भर उसे भूल नहीं सकता।"

इस पर शूरवर्मा ने उसे समझाया—"सुनो, चक्रधरपुर में संयम नाम का एक ज्ञानी है। उनके लक्षण भी ठीक तुम्हारे लक्षण जैसे हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि एक ही प्रकार के गुणवाले संयम कैसे महामानव हुए और तुम कैसे साधारण मानव बन गये? अगर तुम एक बार उनसे मिलो तो इसका रहस्य जानकर तुम भी महामानव बन सकते हो।" इतना कहकर शूरवर्मा वहाँ से
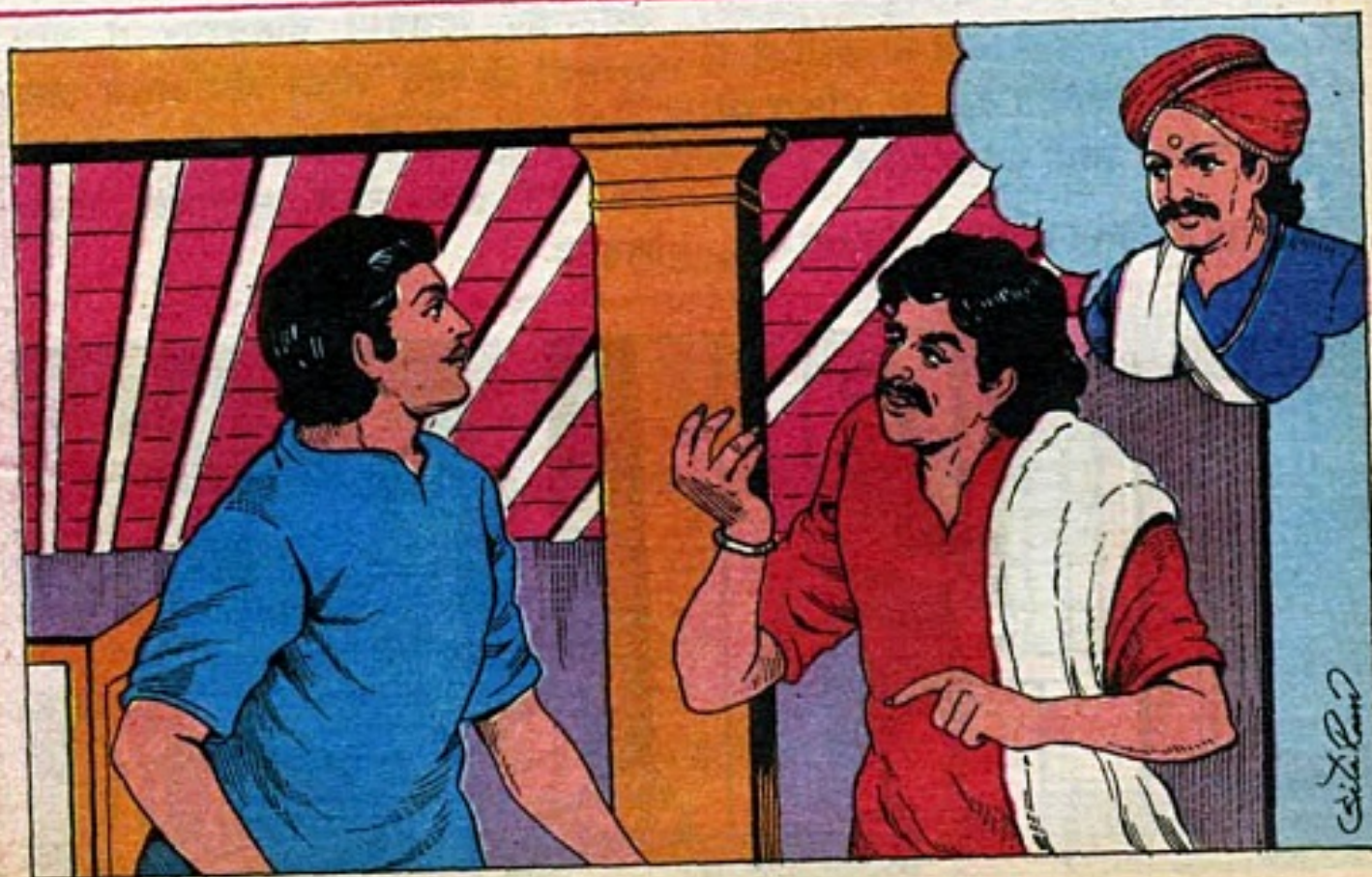
चला गया ।

वैसे नागवर्मा ने कई बार संयम का नाम तो सुना था । उसको जब मालूम हुआ कि वह उसीके गुणवाला आदमी है और महामानव बना है तो उसको बड़ा कुतूहल हुआ । वह तुरंत घर से निकल पड़ा और चक्रधरपुर जाकर उसने संयम के दर्शन किये और अपना सब वृत्तान्त कथन किया ।

संयम के पास अपार संपत्ति है । उनके पत्नी और संतान भी है। घर में कई नौकर-चाकर हैं । वे स्वयं जो कुछ जानते हैं, उसका दूसरों को लाभ दिया करते हैं । कई लोग अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिए उनके पास जाया करते हैं । उनसे लाभ उठानेवाले धनी लोग उनको मूल्यवान उपहार बड़े प्रेम से देते हैं । अब दुनिया में कौन ऐसा है, जिसकी हर कोई तारीफ़ ही करे । कुछ लोग उसकी निंदा भी करने थे । पर वह उस पर घ्यान न देता था । निंदा को वह तत्क्षण भूल जाया करता था ।

नागवर्मा ने निवेदन किया – "महानुभाव, आप तो एक महान ज्ञानी हैं। अपनी ज्ञान-संपदा तथा धन-संपत्ति लोगों में बाँट कर आप महामानव बन गये हैं । मुझे इसक रहस्य बताइए ।"

इस पर संयम ने मुस्कुराते हुए समझाया – "देखो, यह बात सही है कि हम दोनों में समान गुण हैं। पर इसमें भी थोड़ा-सा अंतर है । अगर तुम्हारे साथ कोई छोटासा मज़ाक करे, तो तुम उसे बर्दाश्न नहीं कर पाते हो । सामनेवाले व्यक्ति का मज़ाक उड़ाकर तुम उसी क्षण भूल जाते हो । पर सामनेवाला व्यक्ति मेरी कड़ी-से-कड़ी निंदा करे, तो मैं उसे तत्काल भूल जाता हूँ ।"

अब नागराज की समझ में आ गया कि साधारण मानव तथा महामानव के बीच क्या अंतर है? नागवर्मा चक्रधरपुर से सीधे शूरवर्मा के गाँव पहुँचा और उससे क्षमा माँगी । उसकी पुत्री के साथ विवाह करके कई वर्ष तक उसने सुखपूर्वक जीवन बिताया ।
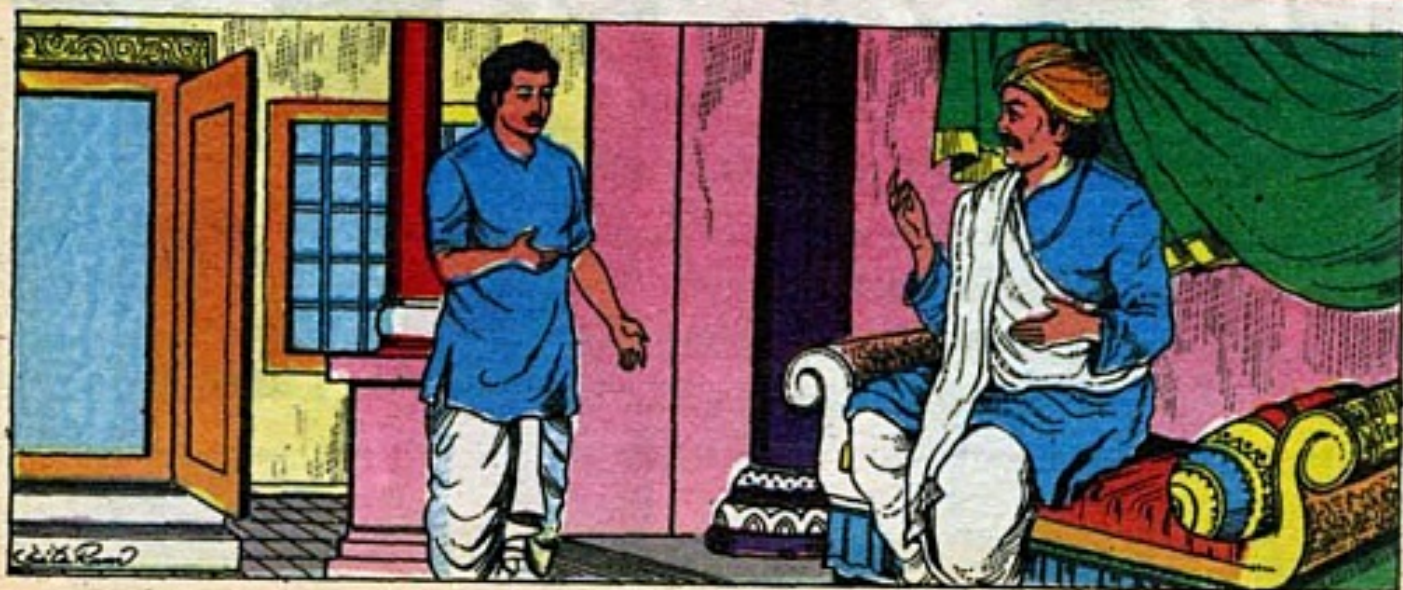
चन्दामामा का परिशिष्ट-१३

ज्ञान का ख़ज़ाना

वह कौन?

प्राचीन काल में डेल्फी नगर के पुजारी भविष्य में घटनेवाली घटनाओं का परिचय कराते थे । इसको वे 'भविष्यवाणी' कहा करते थे । एक बार लिडिया से एक दूत डेल्फी के लिये निकल पड़ा । अपने भविष्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर लेने के लिये लिडिया के राजाने उसे भेजा था ।

कुछ कारणों से दूत पर क्रोधित हो डेल्फी के पुजारियों ने उसका अपमान किया । इस पर दूत ने उन्हें समझाया-अतिथि का आदर करना उनका कर्तव्य है; उसका इस तरह अपमान करना अनुचित है । इसके अनुमोदन में उसने 'गरूड व कीड़ा' नाम की कहानी सुनायी ।

किसी ज़माने में एक गरूड़ ने एक खरगोश को पकड़ने के लिये उसका पीछा किया । खरगोश ने गरूड के पंजे से बचने के लिये एक कीड़े का आश्रय लिया । उस कीड़े ने गरूड़ से खरगोश को छोड़ देने की प्रार्थना की । मगर उसकी कोई परवाह न करते हुए गरूड़ खरगोश को उड़ा ले जाकर उसे खा गया । इसके बाद गरूड़ से बदला लेने के ख़याल से गरूड़ जहाँ भी अण्डे देता, कीड़ा वहाँ पहुँचकर अण्डों को नीचे गिराकर तोड़ देता । अंत में गरूड़ ने बुध की गोद में अण्डे दिये । इस पर भी बिना चुप रहे कीड़ा वहाँ तक पहुँचा और उसने कुछ कूड़ा-करकट बुध की गोद में गिरा दिया । बुध जब अपने शरीर पर गिरी धूल झाड़ने लगा, तब अण्डे नीचे गिरकर फूट गये । इसके बाद कीड़े ने बुध को अपने अतिथि बने खरगोश को गरूड़ द्वारा मार डाले जाने की वार्ता सुनाकर अपनी व्यथा प्रकट की । बुध ने स्वीकार किया कि, इस मामले में गलती गरूड़ की ही है, और कीड़े का प्रतिशोध लेना सही है ।—

यह कहानी सुनकर पुजारी और भी अधिक क्रोधित हुए और उन्हों ने दूत को पहाड़ की चोटी से नीचे फेंक कर मार डाला । यह दूत कौन है?

पृष्ठ ३६ देखिये

क्या आप जानते हैं?

१. गोवा पर अधिकार करनेवाली विदेशी सरकार कौन थी?
२. उस पर कब्ज़ा करने वाले सेनापति का नाम क्या है?
३. हस्तिनापुर की स्थापना किसने की?
४. इतिहास में सब से बड़ा भूकंप कब और कहाँ हुआ था?
५. 'हज़ार कब्रोंवाला नगर' किसे कहते हैं?
६. सील एक ही बारी में लगातार कितने दूर तक तैर सकता है?

पृष्ठ ३६ देखिये

मगध

हमारे देश के प्राचीन राज्यों में मगध एक है । नाम में थोड़ा अन्तर होने के बावजूद मगध का उल्लेख हमारे वेदों में भी हुआ है ।

पुराणों के कथनानुसार जरासन्ध के पिता बृहद्रथ ने इस राज्य की स्थापना की थी । कहा जाता है कि जरासन्ध ने अनेक राजाओं को जीतकर अपने आराध्य देवता पर बलि चढ़ाने उद्देश से उन्हें बन्दी बनाकर रखा था । मगर भीमसेन ने मल्लयुद्ध में जरासन्ध का वध करके सभी राजाओं को मुक्त किया । जरासन्ध के बाद मगध का शासन करनेवाले उसके पुत्र ने महाभारत-युद्ध में पांडवों का पक्ष लिया था । ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया जाये, तो बिम्बिसार नामक एक महाराजा ने मगध पर शासन किया था । उन्हीं के काल में महावीर ने जैन मत का तथा गौतम बुद्ध ने बौद्ध धर्म का यहाँ प्रबोधन किया था ।

बिम्बिसार के मगध राज्य में, जो आज पटना और गया जिलों के नाम से प्रसिद्ध हैं,बिम्बिसार के पुत्र अजातशत्रु ने गंगा और सोन नदियों के संगम के पास पाटली-ग्राम नामक दुर्ग का निर्माण करवाया था । इस दुर्ग के चतुर्दिक् व्याप्त नगर उन दिनों पाटलीपुत्र अथवा कुसुमपुर कहलाता था । आज यह नगर 'पटना' नाम से प्रसिद्ध है ।

मगध एक शक्तिशाली राज्य के रूप में विख्यात था । यही कारण है कि इस भू-भाग पर अधिकार करने की कामना से ग्रीक सम्राट अलेक्झांडर (सिकंदर) हमारे देश में आये थे । मगर उन्हों ने मगध पर हमला करने का साहस नहीं किया । पाटलीपुत्र को राजधानी बनाकर हमारे देश का राज्य अनेक राजाओं ने किया । उन में चन्द्रगुप्त मौर्य व बिम्बिसार का पोता

नीबू खाने में विश्व का प्रतिमान

कोईम्बतूर के ३७ साल के निवासी एन्. पार्थसारथी ने तीन नींबुओं के १२ टुकडे करके उनको ११.२ सेकण्ड में खाकर नया प्रतिमान स्थापित कर, गिन्नीज बुक ऑफ वर्ल्ड रेकार्ड में स्थान पाया है । पार्थसारथी का कहना है कि इसके पूर्व इस क्रिया में विश्व प्रतिमान स्थापित करनेवाले बावी केंप को उसने पराजित किया है ।

अशोक चक्रवर्ती अत्यन्त विख्यात हैं । आज का पटना शहर बिहार राज्य की राजधानी है । गया जिले के और बुद्ध गया के लोग इसे अत्यन्त पवित्र मानते हैं । आज के गया शहर में ही मगध विश्वविद्यालय अवस्थित है ।

Alexander
Chandragupta
Magadha
Magadha Kingdom
Asoka

बाल बाल बच गया

स्विट्झर्लण्ड के मेग्यार सरोवर में गिरकर पाँच वर्ष का बालक दुर्घटनावश डूब गया । उसी समय कुछ तैराक वहाँ पानी में डुबकी लगाने का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे । उन लोगों ने बीस मिनट तक प्रयत्न कर के लगभग तीस मीटर की गहराई तक डूबे उस बालक को अंतिम साँस लेने से पहले किनारे लगा दिया । समीप स्थित एक डाक्टर ने तत्काल उचित चिकित्सा की और परिणामस्वरूप, वह बालक बाल बाल बच गया और बालक के माता-पिता अत्यन्त आनन्दित हुए ।

साहित्यावलोकन

१. शेक्सपियर जिस वर्ष पैदा हुए, उसी वर्ष पैदा हुए विख्यात अंग्रेज़ी नाटककार कौन हैं?

२. उनकी मृत्यु कब और कैसे हुई?

३. आत्महत्या करने पर बाध्य किये गये रोमन कवि कौन?

४. उनको बन्दी बनानेवाले कौन; और ऐसा क्यों किया गया?

५. भारत के बाहर का अपनी निजी शैली में रामायण कथा प्राप्त देश कौनसा है?

६. सागा के माने क्या है?

उत्तरावलि

वह कौन?

ईसप ।

सामान्य ज्ञान

१. पोर्तुगीज ।
२. अल्फान्सो डी अल्बुकर्क ।
३. भरत की पाँचवी पीढ़ी के राजा हस्तिन ।
४. १३३३ में चीन में । यह विभिन्न रूपों में दस साल चला ।
५. अल्जीरिया का एल्कूड नगर ।
६. अलास्कन सील पाँच हज़ार मील दूर तक तैर सकते हैं ।

साहित्य

१. क्रिस्तोफर मार्लोन, १५६४ में ।

२. २९ साल की आयु में, एक कोठी में छुरा भोंककर उनकी हत्या की गयी ।

३. ल्यूकन ।

४. नीरो चक्रवर्ती । ल्यूकन ने उसके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा था ।

५. इण्डोनेशिया ।

६. आयर्लण्ड के मध्ययुगीन गद्य ग्रन्थ ।
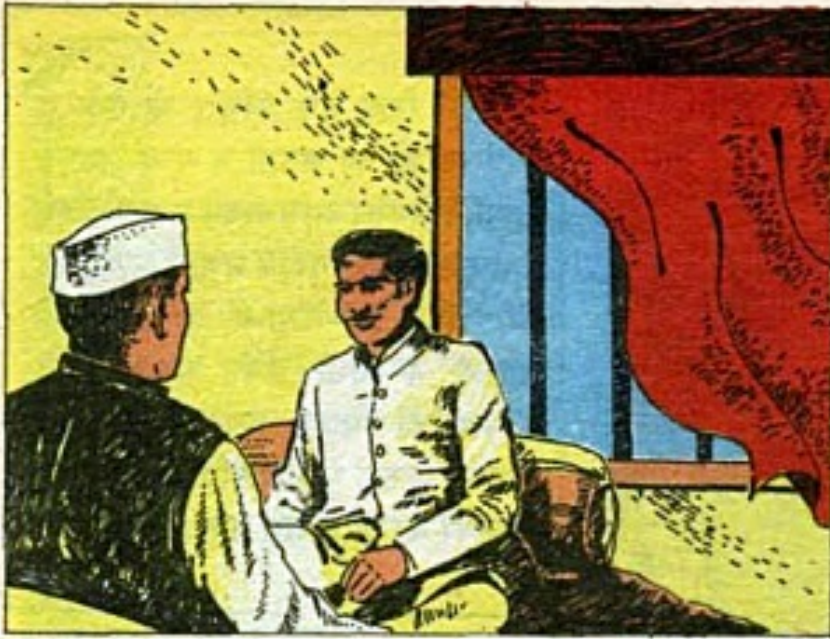
नेहरू की कहानी-११

हिंदुस्तान के गवर्नर जनरल लॉर्ड इर्विन और महात्मा गांधीजी के बीच जब चर्चा होनेवाली थी, उस समय एक युवक गुप्त रूप से पं. नेहरू से मिला। उसने पंडितजी से पूछा–"क्या इस चर्चा के बाद जेलों में बन्दी बने भगतसिंह जैसे क्रांतिकारियों को मुक्त किया जाएगा?" यह युवक था चन्द्रशेखर आज़ाद।

इस घटना के दो-तीन हफ़्ते बाद–जब म. गांधी और इर्विन के बीच चर्चा चल रही थी, पुलिस ने इलाहाबाद के पार्क में चन्द्रशेखर आज़ाद को घेर कर गिरफ़्तार करना चाहा। आज़ाद ने अपनी बंदूक से दो पुलिस सिपाहियों को घायल कर दिया। इस पर उस वीर नौजवान को पुलिस ने वहीं पर गोलियाँ दाग कर मार डाला।

म. गांधी और इर्विन के बीच एक समझौता हुआ। उस समझौते के अनुसार काँग्रेस ने असहयोग आंदोलन बंद किया। ब्रिटिश सरकार ने जेलों में ठूँसे हज़ारों काँग्रेसी बंदियों को मुक्त कर दिया।

जेलों से रिहा हुए काँग्रेस के नेता व कार्यकर्ताओं का जनता ने भव्य स्वागत किया । उनका अभिनन्दन करनेके लिए कुछ स्थानों पर विशेष सभाएँ आयोजित की गई । इन सभाओं में काँग्रेस के नेताओं ने गांधी-इर्विन समझौते को काँग्रेस की विजय तथा सरकार की पराजय के रूप में वर्णित किया । इस पर शासकों का क्रोध बढ़ गया ।

सरदार वल्लभभाई पटेल की अध्यक्षता में कराची में काँग्रेस का वार्षिक अधिवेशन संपन्न हुआ । गुजरात में पैदा हुए ये देशभक्त एक महान् राष्ट्रीय नेता के रूप में उभर रहे थे । कराची का काँग्रेस का अधिवेशन बड़े उत्साहपूर्ण वातावरण में संपन्न हुआ ।

सीमा प्रांत से आये पठान नेता खाँ अब्दुल गफ़ार खाँ भी इस अधिवेशन में महान नेता के रूप में सामने आये । उनके अनुयायी लाल कुर्ते पहनते थे, अतः उनको "लाल कुर्ते" कहकर पुकारा करते थे । उन सब ने काँग्रेस पक्ष को स्वीकार कर लिया ।

गोलमेज़ परिषद् में हिस्सा लेने के लिए गांधीजी लंदन रवाना हुए । भारत की समस्याओं को सुलझाने के लिए इस परिषद का आयोजन किया गया था । फिर भी इसके द्वारा कुछ विशेष संतोषप्रद फल नहीं निकला ।
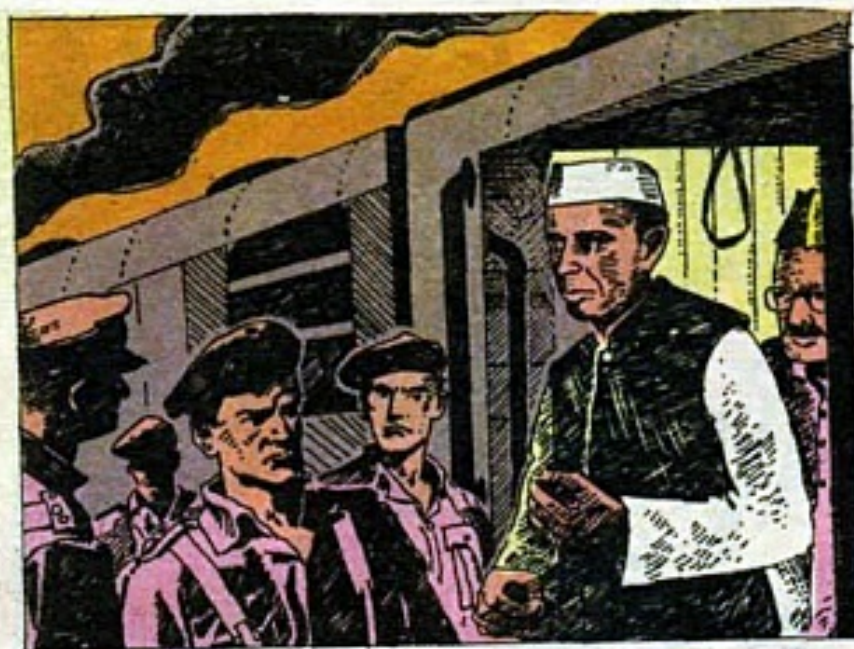
ब्रिटिश सरकार ने जब समझ लिया कि भारत के नेता उनके बताये मार्ग पर चलनेवाले नहीं हैं, तब उसने दमन-नीति का अवलंब किया । पं. जवाहरलाल बंबई में रेल-यात्रा कर रहे थे, उस वक्त अचानक गाड़ी को रोक कर पुलिस ने उनको कैद किया ।

४ जनवरी १९४२ को म. गांधीजी लन्दन से लौटे । तब सरदार पटेल के साथ म. गांधीजी को गिरफ्तार किया गया । सरकार ने जनता के नागरिक अधिकारों को अस्वीकृत किया और इस तरह सरकार तथा स्वातंत्र्य-सैनिकों के बीच चर्चा का मार्ग बंद कर दिया ।
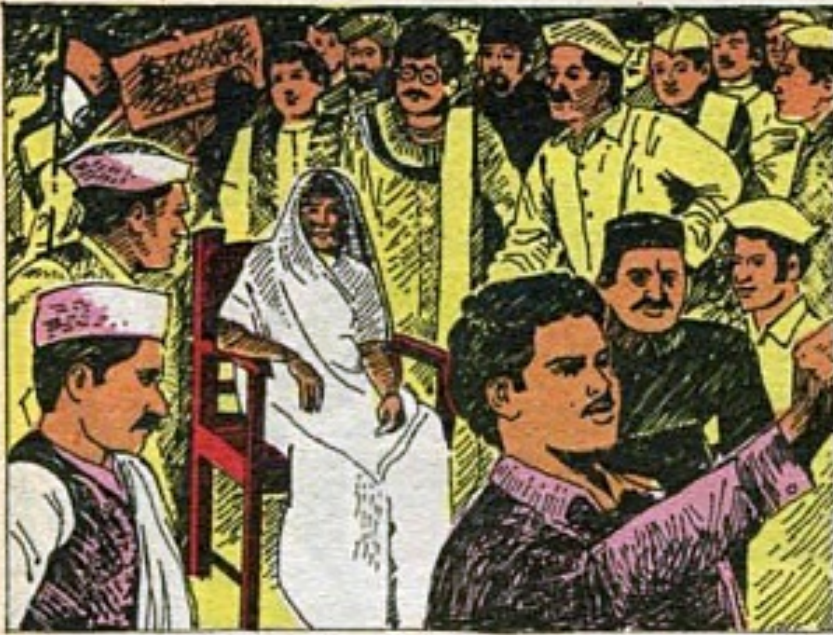
एक बार इलाहाबाद में एक जुलूस निकला। इस जुलूस का नेतृत्व पं. जवाहरलाल की माँ ने किया था। पुलिसवालों ने जुलूस को बीच में ही रोक दिया। पं. जवाहरलाल की माँ वृद्ध एवं दुर्बल थी, इस लिए एक युवक कुर्सी उठा लाया और नेहरूजी की माँ कुर्सी पर बैठ गई।

अचानक पुलिस ने लाठी चलाई। पं. जवाहरलाल की माँ की रक्षा करने के लिए नियोजित सचिव और कुछ अन्य काँग्रेसी कार्यकर्ताओं को पुलिस बन्दी बना कर ले गई। जुलूस को तितर-बितर कर डाला। पंडितजी की माँ को कुर्सी पर से नीचे ढकेल दिया गया।

माँ ज़मीन पर गिर पड़ी। पर पुलिस को इतने से संतोष नहीं हुआ। उन पर लाठियों के प्रहार किये गये, परिणामस्वरूप उनके सर से खून बह निकला और वे बेहोश हो गईं। बाद में बन्दी जवाहरलाल को जब यह खबर मिली तो वे सोचने लगे—दुर्बल और वृद्ध माँ जब खून से सराबोर हैं, तब क्या अब भी अहिंसा-पथ का अनुसरण करना ही उचित है?

(क्रमशः)

तीन प्रश्न

अनुपम देश पर राजा विक्रमसेन शासन करते थे। उनके दो रानियाँ थीं—बड़ी का नाम था वासन्ती और छोटी का मांडवी। वे दोनों अलग-अलग महलों में रहा करती थीं, फिर भी अक्सर वे एक-दूसरी से मिलती रहती थीं। दोनों के बीच किसी प्रकार का भी मनमुटाव या द्वेष की भावना नहीं थी। परस्पर प्रेमपूर्ण व्यवहार करती हुई दोनों सगी बहनें जैसी रहती थीं। दोनों सुशिक्षित और रूपवती थीं। लेकिन मांडवी बोलने में अधिक चतुर और चमत्कार-प्रिय थीं।

राजा विक्रमसेन खुद एक उत्तम कवि थे। साथ ही वे विनोदप्रिय तथा चतुरोक्तियों के प्रेमी थे। इस कारण वे अपने सभाभवन के सदस्यों के सामने चतुरोक्तिपूर्ण समस्याएँ रखते थे और उनके उत्तर सुनकर अपना मनोरंजन कर लेते थे। यदा कदा वे सभाभवन के कार्य-कलापों का परिचय मांडवी को भी कराते थे।

एक बार विक्रमसेन सभाभवन में घटित एक चमत्कार-पूर्ण प्रसंग मांडवी को सुना रहे थे, तब मुस्कुराते हुए मांडवी ने राजा से कहा, "महाराज, आप तो बहुत ही विनोदप्रिय हैं, कवि-राज हैं। मैं आप से तीन प्रश्न पूछती हूँ। मेरे प्रश्नों के उत्तर देंगे आप?"

मांडवी की बातें सुनकर राजा का कुतूहल जाग पड़ा और वे बोले, "तीन प्रश्न पूछोगी? पूछो, सूनूँ तो सही! तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर हम दे ही सकेंगे ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। फिर भी कोशिश करेंगे।"

"ठीक है, सुन लीजिये—मेरा प्रथम प्रश्न है कि, पति अपनी पत्नी के सौन्दर्य की प्रशंसा किस रूप में करें, तो पत्नी अधिक प्रसन्न होगी? दूसरा प्रश्न है—चाहे कोई नारी कितनी भी सुशिक्षित और सहनशील क्यों न

अजय श्रोत्री

हो, किस संदर्भ में वह अपने पति के डाँटने पर अपने लिये असहनीय अपमान की बात मानती है? अब तीसरा प्रश्न है,—ऐसी कौन बात है, जिसे नारी बिलकुल सहन नहीं कर सकती?" मांडवी ने अपने तीनों प्रश्न पूछ लिये। और वह राजा की ओर उसकी प्रतिक्रिया के लिए देखने लगी।

उसने पूछा—"क्या लगता है? आप सहज इन प्रश्नों के जवाब दे सकेंगे? कम-से-कम कोशिश तो कीजिएगा।"

पत्नी के प्रश्नों को राजा विक्रमसेन ने ध्यान से सुन तो लिया, लेकिन सोचने पर भी वे उन प्रश्नों के उत्तर दे नहीं पाये। वैसे उन्हों ने कुछ जवाब सोचे, मगर खुद उन्हीं को वे अर्थहीन लगे।

थोडी देर सोचने के बाद अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए राजा ने कहा, "तुम ने प्रश्न तो बड़े जटिल पूछे! हमें नहीं लगता कि हम इन प्रश्नों के जवाब तुरन्त ही दे सकेंगे। कुछ सोचना पड़ेगा।"

मांडवी ने हँसकर कहा, "तो फिर आप ने क्या सोचा? अच्छी बात है, कल आप राज सभा में ये प्रश्न पूछिये।"

विक्रमसेन को मांडवी की बातें कुछ ऐसी लगीं, कि मानो, वह उस पर आरोप लगा रही हो। वे उठ कर वहाँ से चलते हुए बोले, "अच्छी बात है, देखूँगा।"

मांडवी अपने पति को जाते हुए थोड़ी देर देखती रही, और फिर हँस कर मौन हो गयी। विक्रमसेन वहाँ से सीधे वासन्ती के अन्तःपुर में चले गये।

अपने पति को गंभीर देख कर वासंती ने घबराकर पूछा, "प्रभु, आप परेशान से लग रहे है! क्या राज काज......"

"हाँ, हाँ, तुम्हारी बहन ने बड़ा राज-काज़ उत्पन्न किया है न!" विक्रमसेन ने रुष्ट स्वर में कहा।

यह उत्तर पाकर वासन्ती ने हल्की साँस ली और मुस्कुराकर पूछा, "क्या किया मांडवी ने महाराज?"

इस पर विक्रमसेन ने उसे सारा वृत्तान्त सुनाया।

उसे सुनकर वासन्ती ने पूछा, "आप की इस उलझन को क्या मैं सुलझा दूँ? ये प्रश्न बहुत कठिन तो नहीं लगते मुझे! मैं इनके

उत्तर आपको बता दे सकती हूँ ।"

विस्मय में आकर विक्रमसेन ने कहा, "इन प्रश्नों के उत्तर तुम दोगी? उंहूं, यह अच्छा नहीं होगा ।"

"कोई बात नहीं; नारी का मन केवल नारी ही पहचान सकती है । मैं आप को उत्तर सुनाऊँगी, मगर आप मांडवी से कहिये कि आप ने स्वयं ही सोच विचार कर उत्तर ढूँढ़े हैं ।" इस प्रकार समझा बुझाकर वासन्ती ने मांडवी के तीनों प्रश्नों के उत्तर राजा को सुनाये ।

दूसरे दिन संध्या समय राजा फिर मांडवी के अंतःपुर में पहुँचे और उन्होंने मांडवी से कहा, "तुमने कल जो कठिन प्रश्न पूछे थे, उनके उत्तर क्या मैं अभी सुना सकता हूँ?"

"प्रश्नों के उत्तर क्या आप ने स्वयं सोचकर पाये हैं?" अपनी हँसी रोकते हुए मांडवी ने पूछा ।

"हाँ, हाँ!" दर्प से विक्रमसेन से उत्तर दिया ।

"ठीक है, कहिये तो!" मांडवी ने अनुमति दी ।

"तो सुन लो । तुम्हारे प्रथम प्रश्न का उत्तर है—किसी नारी की रंभा, ऊर्वशी कहकर प्रशंसा करने की अपेक्षा उसे दूसरी, किसी रूपवती नारी की तुलना में तुम्हीं अधिक सुन्दर हो,-ऐसा कहने से वह अधिक प्रसंन्न हो जाती है ।" विक्रमसेन ने कहा ।

"ठीक, अब दूसरे प्रश्न का जवाब?" मांडवी ने पूछा ।

"यदि कोई व्यक्ति अपनी सौतों व देवरानियों के सामने अपने पति की निन्दा जनक छोटी सी बात भी कहे तो वह उस स्त्री को असहनीय अपमान की बात लगती है ।—यह है तुम्हारे दूसरे प्रश्न का उत्तर! ठीक है?" विक्रमसेन ने पूछा ।

"हाँ ठीक है, अब तीसरे प्रश्न का उत्तर?" मांडवी ने पूछा ।

"स्त्री सब कुछ सहन कर सकती है, मगर पति अगर उसके सामने किसी पर-नारी की प्रशंसा करे, तो वह किसी भी प्रकार से यह सहन नहीं करेगी । यह हुआ तुम्हारे अन्तिम प्रश्न का जवाब ।" बड़े गर्व के साथ राजा ने अपने उत्तर समाप्त किये ।

"यह उत्तर भी बिलकुल सही है

महाराज । इसका मतलब है कि, दीदी ने सही उत्तर सुनाकर आप को यहाँ भेज दिया है—सच है?" मांडवी ने हँसते हुए कहा ।

यह सुन विक्रमसेन चौंक उठे । "नहीं, नहीं! ऐसी बात नहीं है ..." कैफियत देने के स्वर में राजा कुछ कहने को हुए ।

मगर बड़ी नज़ाकत के साथ राजा को रोकते हुए मांडवी ने कहा, "सत्य को छिपाने की कोई ज़रूरत नहीं है महाराज! कल आप यहाँ से जल्दी चले गये, इसका अर्थ था, आप यहाँ से सीधे दीदी के महल में चले गये । यहाँ से निकलते वक्त आप का चेहरा गंभीर था और उसमें क्रोध की छाया प्रतिबिंबित थी । आप का चेहरा देख कर दीदी ने ज़रूर कारण पूछा होगा । आप ने भी वास्तविक कारण उसे सुनाया होगा और दीदी ने आप को सही उत्तर सुनाये होंगे । सच है न मेरा कहना?"

विक्रमसेन ने सोचा कि अब सत्य को छिपाना उचित नहीं । हँसकर उसने मांडवी से पूछा, "तुम्हारा कहना तो बिलकुल सत्य है । लेकिन यह बताओ, तुमने कैसे सही अनुमान किया?"

"मेरे प्रश्नों के उत्तर आप खुद समझ लेते, तो ज़रूर मेरी बुद्धिमत्ता की प्रशंसा करते हुए तुरन्त आप ने जवाब दिये होते । लेकिन आप ने अभी यहाँ प्रवेश करते हुए—बड़े कठिन प्रश्न पूछे थे कहकर मेरा परिहास किया । पहले आप मेरे प्रश्नों के उत्तर नहीं दे पाये इस व्यथा ने आप को मेरा परिहास करने को प्रेरित किया । जब मैं समझ गयी कि ये उत्तर आप के कहे हुए नहीं है, तो आप को वे किसी और ने सुझाये, इसकी कल्पना करना कोई कठिन काम नहीं है ।" मांडवी ने कहा ।

अपनी पत्नी की बुद्धिमानी पर राजा विक्रमसेन मन ही मन बड़े प्रसन्न हुए । "हाँ, हाँ; तुम्हारे कथनानुसार तुम पर क्रोध के कारण ही मैं ने तुम्हारी अवहेलना की थी । पर इस समय मैं तुम्हारी बुद्धिमानी की हृदय से प्रशंसा करता हूँ ।" कहकर राजा ने अपने कंठ से मोतियों का हार उतार कर मांडवी के गले में पहना दिया ।

श्रीकृष्ण बाणासुरकी नगरीका अवलोकन करने लगे। इसी समय नारद ने वहाँ प्रवेश किया और कहा– "श्रीकृष्ण, आप देख रहे हैं न? पार्वती के साथ शिवजी इस नगरी की स्वयं रक्षा कर रहे हैं। इस लिए अपने कार्य को सफल बनाने में आप को सावधानी बरतनी चाहिए। शिवजी का सामना करना कोई साधारण बात नहीं। यह भी सोचो कि शिवजी का विरोध हो तो इस समय हमें क्या करना चाहिए। कहीं बाद में पछताना न पड़े।"

इस पर श्रीकृष्ण ने मुस्कुराते हुए कहा– "हमारे अंगीकृत कार्य में बाधा डालनेवाला स्वयं परमेश्वर भी क्यों न हो, हम यथाशक्ति प्रयत्न करेंगे अवश्य, पर वापस जाकर अपने कार्य को असफल नहीं होने देंगे।"

यह कहते हुए श्रीकृष्ण ने नगर के द्वार पर जाकर अपना पांचजन्य फूँका। उस गंभीर ध्वनि को सुन कर महासागर की तरह बाणासुर की सेनाएँ उमड़ कर वहाँ आ पहुँचीं। श्रीकृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न और गरुड़ ने जोश में आकर राक्षस-सेनाओं का संहार करना प्रारंभ किया। बाणासुर के अधिकांश सैनिक मर गये और बाक़ी सैनिक युद्ध-भूमि से भाग खड़े हुए।

बाणासुर ने अपने योद्धाओं को ताने देते हुए कहा– "तुम वीरों ने राक्षस-कुल में जन्म लेकर युद्ध-विद्या का अध्ययन किया है। तिस पर भी तुम लोग यों रण-भूमि से भाग चले आए हो? युद्ध-भूमि से भाग जाना कायरों का काम है। तुम्हारे इस काम से सारे राक्षसों को अपमानित होता पड़ेगा।

युद्ध-भूमि छोड़ते हुए तुम को ज़रा भी लज्जा नहीं महसूस हुई?

मैं हूँ, मेरे मंत्री कुंभांड है,प्रथम श्रेणी के अन्य वीर योद्धा भी हमारे साथ हैं । हम सब के सामने ये शत्रु किस खेत की मूली हैं? ठहरो ।"

इसके बाद भाग आये राक्षसों को कुंभांड ने भी समझाया । पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ । राक्षस सेना बिना रुके भाग खड़ी हुई । पराक्रमी शत्रुओं को देखकर उन्हें विश्वास हो गया था कि उनकी मौत सुनिश्चित है । ऐसी हालत में युद्ध-भूमि को छोड़ देना ही ठीक होगा ।

यों अपने भक्त बाणासुर का अपमान होते देख शिवजी क्रोधित हो उठे । वे स्वयं युद्ध के लिए तैयार हो सिंहों से जुते रथ पर सवार हो निकल पड़े । उनके रथ पर वृषभध्वज फहरा रहा था । नंदिनी को सारथी बना कर कुमार स्वामी और प्रथम श्रेणी के वीरों के साथ शिवजी ठाठ से चल निकले ।

अब शिवजी और श्रीकृष्ण के बीच युद्ध शुरू हुआ । प्रारंभ में ही शिवजी ने श्रीकृष्ण पर सौ बाणों से प्रहार किया । इसके उत्तर में श्रीकृष्ण ने शिवजी पर इंद्रास्त्र फेंका । उसके भीतर से हजारों बाण निकल आये और उन्होंने शिवजी के रथ को घेर लिया । तब शिवजी ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया, जिसके प्रभाव से चारों तरफ अग्नि-ज्वालाएँ उठीं और उन्होंने सारे बाणों को भस्म कर दिया । इसके बाद वे ज्वालाएँ श्रीकृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न और गरुड़ को भी घेरने लगीं । श्रीकृष्ण ने गुस्से में आकर वारुणास्त्र का प्रयोग करके उन ज्वालाओं को बुझा दिया ।

शिवजी ने अब पाँच-छे भयंकर अस्त्रों का प्रयोग किया । उन अस्त्रों को व्यर्थ बना सकनेवाले अन्य अस्त्रों का प्रयोग कर अंत में श्रीकृष्ण ने मंत्र फूँक कर वैष्णवास्त्र को फेंका । शिवजी की समझ में नहीं आया कि उस महा अस्त्र को कैसे रोका जाए? तब अत्यन्त क्रोध में आकर शिवजी ने युगांत कर सकनेवाले भयंकर पाशुपतास्त्र को निकाला ।

शिवजी के उद्रेक को जान कर अब श्रीकृष्ण ने अपना जृंभकास्त्र निकाल कर उसे

शिवजी की ओर फेंक दिया । दूसरे ही क्षण शिवजी निर्बल हो जंभाइयाँ लेने लगे । उनके हाथ से धनुष और बाण नीचे गिर पड़े । शिवजी का यों निर्बल हो युद्ध-भूमि में गिर पड़ना बड़ा अनपेक्षित था । सब लोगों को बड़ा ही आश्चर्य हो रहा था ।

इसी समय बाणासुर भी युद्ध-भूमि में प्रवेश कर चुका था । शिवजी की यह अवस्था देख कर उसे भी बड़ा अचंभा हुआ । अपने अभिभावक का यों पराभूत होना उससे सहा नहीं गया । उसने शिवजी में चेतना लाने का असफल प्रयास किया । श्रीकृष्ण ने दसों दिशाओं को प्रतिध्वनित करनेवाले पांचजन्य को फूँका ।

यह देख प्रथम श्रेणी के वीर बहुत ही गुस्से में आ गये । उन्होंने प्रद्युम्न को घेर कर उसे विविध आयुधों से मानो ढक दिया । साथ ही राक्षसों ने भी उसके साथ युद्ध शुरू किया । अब प्रद्युम्न की अवस्था बहुत दयनीय हुई । उसकी समझ में नहीं आया कि अब इस बाँके समय पर क्या किया जाय । फिर भी डगमगाया नहीं । अपने पास के एक विशेष अस्त्र की उसे याद आई । प्रद्युम्न ने अपने सम्मोहनास्त्र द्वारा उन सब को निद्रावस्था में डाल दिया और फिर अनेक राक्षसों का संहार किया ।

इस बीच कुमार स्वामी ने अपने पिता को युद्ध से विमुख होते देख स्वयं उनके स्थान पर लड़ना शुरू किया । श्रीकृष्ण, बलराम तथा प्रद्युम्न के साथ लड़ते हुए उसने उनको घायल कर दिया और खुद भी घायल हो गया । अब कुमारस्वामी श्रीकृष्ण पर क्रोधित हो गया और उसने उन पर ब्रह्मशिरोनामास्त्र फेंका । श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र द्वारा उसको काट डाला । फिर उन्होंने कुमारस्वामी पर अपने चक्रका प्रयोग किया । वह कुमार स्वामी पर लगने ही वाला था, कि लंबादेवी नामक एक देवता-नारी ने प्रवेश किया और वह उसे युद्ध-भूमि से दूर ले गई ।

अपने प्रमुख योध्दाओं को इस प्रकार रण-भूमि से हटते देख बाण ने सोचा कि अब उसे स्वयं संग्राम करने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है । बड़ी खुशी से वह स्वयं युद्ध-भूमि में आ पहुँचा । दोनों के बीच जो

कुछ भी करें तो मैं आपको रोक नहीं सकती । मैंने इस बाण को अपने पुत्र के समान पाल रखा है । आपके लिए उचित है कि आप मुझे पुत्र-शोक में न डुबा दें । इस लिए इसकी रक्षा न करेंगे?"

श्रीकृष्ण ने पार्वती को समझाया–"देवी, अपने हज़ार हाथों के बल पर यह बहुत उन्मत्त बन गया है । इसके केवल दो हाथ रखकर शेष हाथों को काट देने पर ही इसका घमण्ड नष्ट हो सकता है । उस हालत में यह अपना राक्षसत्व छोड़ कर आपके आश्रय में पलनेवाले सुयोग्य पुत्र के रूप में रह जाएगा । आप कृपया मेरे सामने से हट जाइए ।"

श्रीकृष्ण के वचन सुन कर पार्वती ने लंबा देवी को बाणासुर के सामने से हट जानेको कहा । पार्वती के साथ लंबा देवी के अदृश्य होते ही श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन-चक्र का प्रयोग कर के बाणासुर के दो हाथों को छोड़ बाकी सारे हाथों को काट डाला और वह पुनः श्रीकृष्ण के हाथ में लौट आया ।

इतना होने पर भी बाणासुर का पौरुष बना रहा।उसने अपने शेष दो हाथों में धनुष-बाण लेकर श्रीकृष्ण पर बाणों की वर्षा की । इस पर गुस्से में आकर श्रीकृष्ण ने पुनः उस पर अपने सुदर्शन चक्र का प्रयोग करना चाहा, पर इतने में स्वयं शिवजी अपने परिवार समेत वहाँ उपस्थित होकर बोले–"हे श्रीकृष्ण, यह मेरे संरक्षण में है । इस का वध करके मेरे दिये अभय-दान को व्यर्थ मत करना । आप

भयंकर युद्ध हुआ, उसमें बाण के रथ तथा आयुध चूर चूर हो गये । उसकी ध्वजा टूट कर गिर पड़ी । इसके बाद श्रीकृष्ण का बाण बाणासुर के वक्ष को भेद कर चला गया और बाणासुर एकदम बेहोश हो गया । बाणासुर की यह अवस्था देख कर उसकी सेना का सारा हौसला पस्त हो गया । रहे-सहे योद्धा भी रण-भूमि को त्यागने के लिए तैयार हो गए ।

बाणासुर को श्रीकृष्ण के हाथों पराजित होते देख शिवपार्वती ने पुनः एक बार लंबा देवी को ही भेजा । वह बाणासुर के आगे आकर खड़ी हो गई । स्वयं पार्वती भी अदृश्य रूप में वहीं आकर खड़ी हो गई ।

इस पर श्रीकृष्ण की बातें सुन कर पार्वती ने कहा–"आप तो स्वयं सर्व-समर्थ हैं । आप

अपने चक्र का प्रयोग न कीजिए ।"

शिवजी का अनुरोध श्रीकृष्ण टाल न सके । बाणासुर का वध करने का अपना विचार उन्होंने छोड़ दिया । अब श्रीकृष्ण शिवजी की स्तुति करके गरुड़ पर सवार हो अनिरुद्ध को देखने चले । बाणासुर को नन्दिकेश्वर ने शिवजी के पास पहुँचा दिया । बाणासुर के हाथों के कटने के कारण उसे जो पीड़ा हो रही थी उसे शिवजी ने दूर किया और अपने प्रथम वीरों के बीच अत्यन्त ऊँचा स्थान देकर नन्दी के बराबर का पद प्रदान कर उसे संमानित किया । इसके बाद बाणासुर महाकाल नाम से संबोधित होने लगा । और फिर शिवजी अंतर्धान हो गये ।

इधर गरुड को देखते ही सर्पों के रूप में अनिरुद्ध को वन्दी बनाये हुए सभी सर्प पुनः बाणों का रूप धारण कर नीचे गिर पड़े । इसी समय नारद वहाँ पर आ पहुँचे । चित्ररेखा भी आ गई । श्रीकृष्ण, बलराम और प्रद्युम्न ने अनिरुद्ध को आलिंगन दिया । उसने भक्तिपूर्वक सब को प्रणाम किया ।

नारद ने श्रीकृष्ण से निवेदन किया—"श्रीकृष्ण, अब विलंब ही क्यों? अनिरुद्ध का विवाह संपन्न किया जाए ।"

मुहूर्त का समय निकट ही था । इस लिए कुंभांड ने विवाह की सारी तैयारियाँ कीं और श्रीकृष्ण को प्रणाम करके निवेदन किया—"आप मुझ पर अनुग्रह करके मेरी रक्षा कीजिए ।"

श्रीकृष्ण ने कुंभांड से कहा—"मैंने सुना है कि तुम अत्यन्त योग्य व्यक्ति हो । बाणासुर की यह नगरी तुम्हीं ले लो । और निश्चिन्त
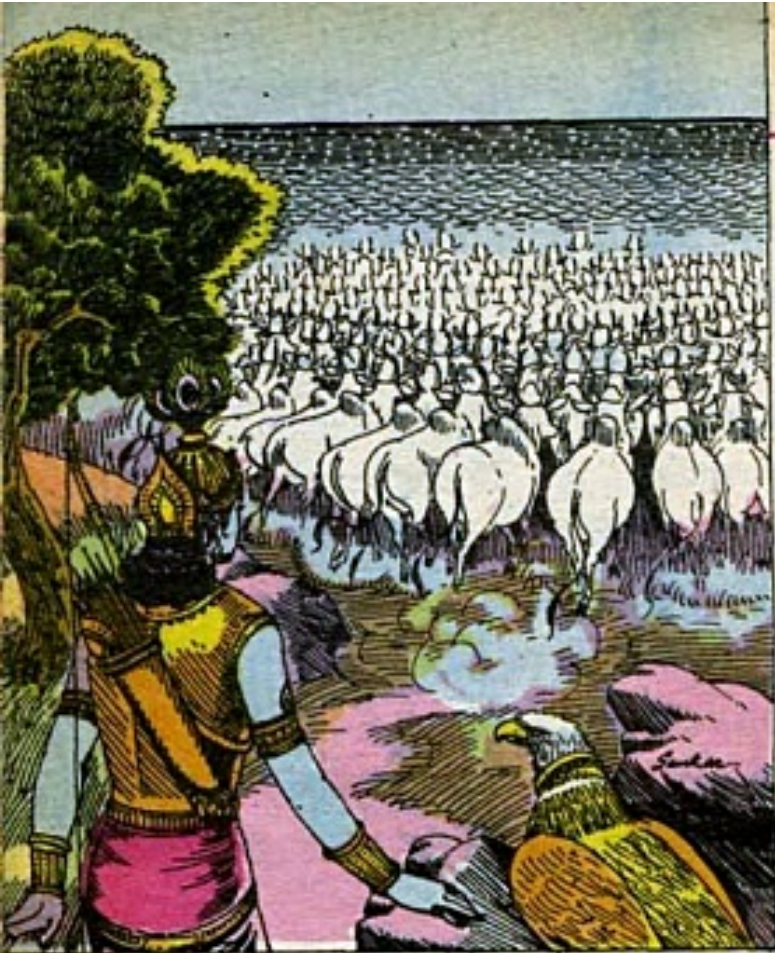
होकर यहाँ का शासन चलाओ ।"

अब उषा और अनिरुद्ध का विवाह वैभवपूर्वक संपन्न हुआ। श्रीकृष्ण नव-दंपति को शिव-पार्वती के पास ले गये । उषा और अनिरुद्ध ने शिव-पार्वती को नम्रतापूर्वक प्रणाम किया और नव वर-वधू ने उनसे आशीर्वाद प्राप्त किये । पार्वती ने अनिरुद्ध को वाहन के रूप में बाणासुर के मयूर को भेंट किया ।

विजयी श्रीकृष्ण वहाँ से अब निकलने को हुए तब कुंभांड ने प्रार्थना की – "बाणासुर की गायें वरुण के पास हैं । उन गायों का दूध पीने से बल और वीर्य प्राप्त होते हैं । आप से निवेदन है कि आप उन्हें अपने अधीन कर लीजिए ।"

यह समाचार पाकर श्रीकृष्ण दाऊ बलराम और अपने पुत्र प्रद्युम्न को गरुड़ पर चढ़ा कर शीघ्र गति से पश्चिमी समुद्र के तट की ओर रवाना हुए । वहाँ के वनों में लाखों की संख्या में विचरनेवाली गायों को देखा । गायों को वश में करने की कला श्रीकृष्ण बचपन से ही जानते थे, इस लिए वे झट गायों के पास पहुँच गये । उन्हें देखने ही गायें जल्दी से दौड़ कर समुद्र में अदृश्य हो गईं ।

श्रीकृष्ण ने निराश हो गरुड़ से पूछा – "यह क्या चमत्कार है? क्या मेरा प्रयत्न यहाँ निष्फल हो जाएगा?"

गरुड़ ने सुझाया – "अब तो वरुण से युद्ध करना अनिवार्य लगता है!"

इसके बाद गरुड ने जोरों से अपने पंख फड़फड़ाये । समुद्र का सारा जल हट गया और उसके तल में सारा नाग लोक स्पष्ट दिखाई देने लगा । श्रीकृष्ण ने अपना पांचजन्य फूँक कर वरुण के महल पर धावा बोल दिया ।

दूसरे ही क्षण सड़सठ रथों पर सवार हो शंखनाद करते हुए वरुण के सैनिक श्रीकृष्ण पर चढ़ आये । श्रीकृष्ण ने उनके साथ दारुण युद्ध किया । उनके साथ बलराम व प्रद्युम्न ने भी वीरतापूर्वक युद्ध किया । गरुड ने भी उनकी मदद की । इन चारों का पराक्रम देख वरुण के अनुचर भाग खड़े हुए ।

अब श्रीकृष्ण के आक्रमण पर कुपित हो वरुण स्वयं उनसे लड़ने के लिए आन पहुँचा । इस महासंग्राम में श्रीकृष्ण ने
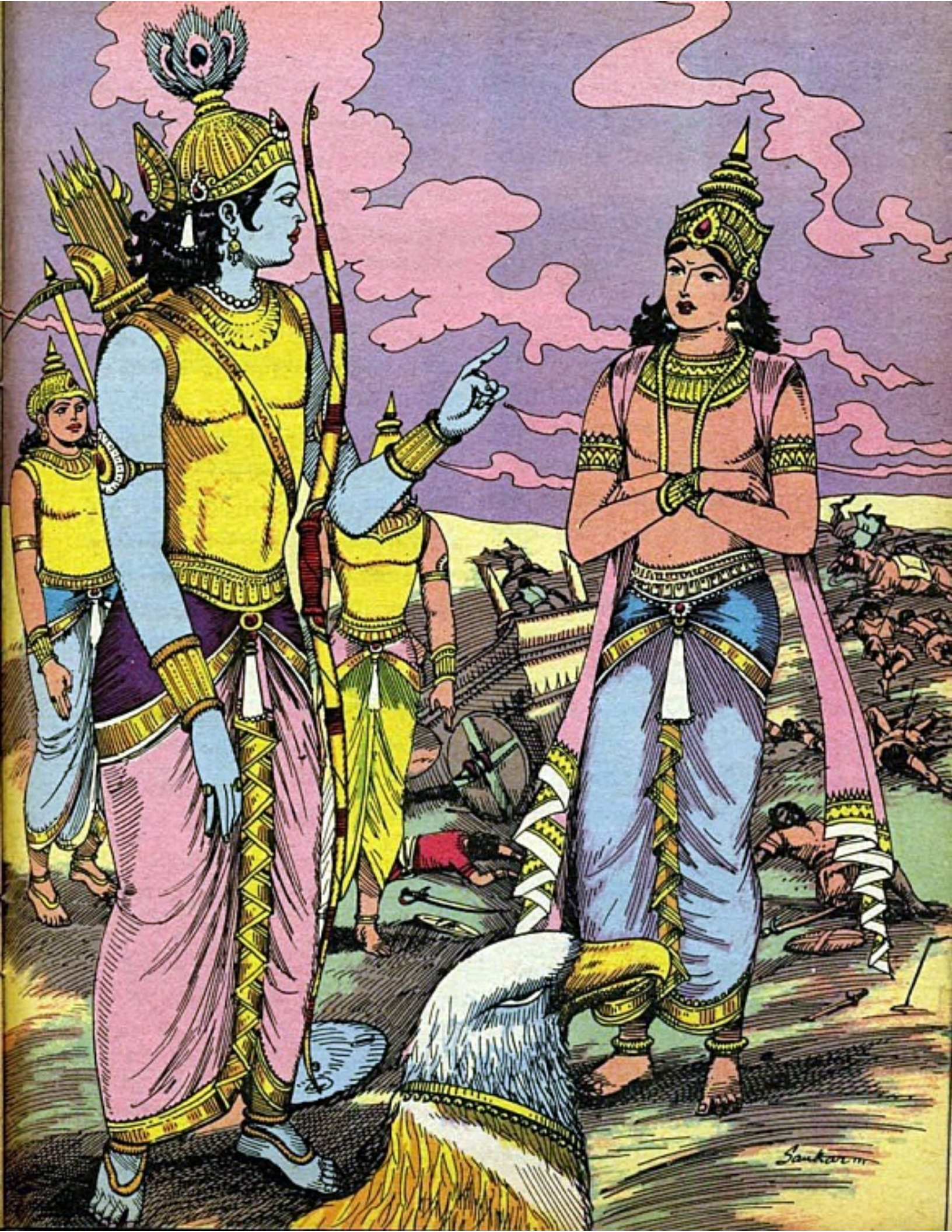
वैष्णवास्त्र का प्रयोग किया । वरुण भयभीत हो समझौता करने को राजी हो गया ।

श्रीकृष्ण ने अपनी शर्त रखी – "मुझे इतने से संतोष नहीं है कि तुम मेरी शरण में आ गये । बाणासुर की सभी गायें पहले मेरे अधीन कर दो ।"

वरुण ने निवेदन किया – "आप कृपया गायों की माँग मत कीजिएगा । क्यों कि बाणासुर ने इन गायों को जब मेरे हाथ सौंप दिया था, तब मैंने उसको वचन दिया था कि मेरे प्राण रहने तक मैं युद्ध करने के लिए तैयार रहूँगा, पर इन गायों को किसी और हाथों में नहीं सौंपूँगा । मैंने सत्य बात आपको बता दी । अब आगे आप जो उचित समझें कीजिए ।"

इस पर श्रीकृष्ण ने गायों की आशा छोड़ दी और अपने दिव्य अस्त्र को वापस ले लिया । अब वरुण ने श्रीकृष्ण का यथोचित आदर-सत्कार किया और उनको अपने लोक से बिदा किया ।

वरुण से बिदा लेकर श्रीकृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न अनिरुद्ध सभी गरुड पर सवार हो अपनी नगरी में पहुँचे । वहाँ उन्होंने विजयसूचक अपने पांचजन्य की ध्वनि की । यह ध्वनि सुन कर समस्त प्रमुख यादव अपने विशाल दल-बल के साथ श्रीकृष्ण का स्वागत करने पहुँच गये । तब तक श्रीकृष्ण नगर के बाहर के उद्यान में उतर कर विहार कर रहे थे । उनके साथ इन्द्र आदि देवता भी थे । यादव श्रीकृष्ण से मिले और उन सब को रथों में बैठाकर वैभवपूर्वक नगर के अंदर ले गये । श्रीकृष्ण के विजय प्राप्त कर लौटने का समाचार पाकर नगर के सारे नागरिक पथों पर अनुशासन के साथ खड़े रहे । श्रीकृष्ण का शोणपुर में अग्नियों पर विजय पाना, शिवजी को निर्बल बनाना, पार्वती को पुत्र-भिक्षा प्रदान करना, बाणासुर के हाथ काट कर प्राणों के साथ उसे छोड़ देना इत्यादि की वे आपस में चर्चा कर रहे थे । उनकी बातें सुनकर श्रीकृष्ण को परमानन्द हुआ ।

नगर अच्छे ढंग से अलंकृत किया गया था । नगर में प्रवेश करते ही श्रीकृष्ण अपने महल में चले गये । उषा और अनिरुद्ध भी अपने भवन में पहुँचे ।

वल्लभ और वनदेवी

किसी गाँव में वल्लभ नाम का एक लकड़हारा रहता था। एक दिन मुँह अँधेरे ही अपनी कुल्हाड़ी कंधे पर रख कर वह जंगल जाने के लिये निकला ही था, कि उसकी पत्नी ने उसे बुला कर कहा, "सुनोजी, कल हमारी बेटी की जन्मगाँठ है। हर दिन से आज ज़रा ज़्यादा लकड़ी काट कर हाट में बेच देना, कुछ ज़्यादा रुपये हाथ आएँगे। अब तक अपनी बेटी की वर्षगाँठ हमने यूँ ही मनाई। इस बार आसपास के लोगों को बुला कर धूम-धाम से उसका जनम-दिन मनाएँगे। ना मत करना। मैं शाम को तुम्हारी प्रतीक्षा करती रहूँगी।"

स्वीकृति सूचक सिर हिलाकर वल्लभ जंगल की ओर चल पड़ा। लेकिन दुर्भाग्य से दोपहर तक सारा जंगल छानने पर भी हररोज़ के जितनी लकड़ी भी वह जुटा नहीं पाया; ज्यादा लकड़ी की बात ही दूर! वह बहुत निराश हुआ। अपनी पत्नी की कही सारी बातें उसे याद आईं। अब बेटी की बरस-गाँठ कैसे धूम-धाम से मना सकेंगे? अब बीवी से कहूँ तो क्या कहूँ? शाम होने को हुई, तब खीझकर उसने समीप के ही एक हरेभरे वृक्ष पर कुल्हाड़ी उठायी।

दूसरे ही क्षण उसकी आँखें चकाचौन्ध करती हुई एक वनदेवी ने प्रत्यक्ष होकर उससे पूछा, "अरे बेटे, ज़रा रुक जाओ तो? जंगल के इस एक मात्र चन्दन वृक्ष को काट रहे हो भला? तुम्हें क्या कोई दूसरा सूखा पेड़ नहीं मिला?"

हड़बड़ाकर वल्लभ बोला, "आज की हालत में मेरे लिये सब पेड़ एक बराबर ही हैं। कल मेरी बेटी की बरसगाँठ है। इस अवसर पर उसे एक तोते का खिलौना चाहिये। लकड़ी काटना तो मेरा पेशा ही है। न काटूँ, तो खाऊँगा क्या?"

निर्मला श्रीवास्तव

"तो मैं तुम्हारी बेटी के लिये खिलौनेवाले तोते के बदले बोलनेवाला असली तोता दूँगी। मगर इस चन्दन-वृक्ष को नहीं काटो।" यह कहकर वनदेवी ने तालियाँ बजायीं। तत्काल कहीं से एक पंचरंगा तोता आकर वनदेवी के कन्धे पर बैठ गया। चूमकर वनदेवी ने उसे वल्लभ के हाथ सौंप दिया।

तोते की ओर शंका भरी दृष्टि डालकर वल्लभ ने पूछा, "क्या सचमुच यह तोता बोल सकता है?"

"वनदेवी के कहने के बाद भी तुम अगर सन्देह करो, तो तुम्हारी आँखें फूट जायेंगी।" तोते ने सावधान किया।

इसके बाद रास्ते में तोते की बातें सुनता हुआ लकड़हारा खुशी खुशी घर पहुँचा। उस समय वल्लभ की बेटी तोते वाले खिलौने के लिये राह लगायें माँ के पास ज़िद कर रही थी।

"अच्छे बच्चे शोर नहीं करते। मैं आ गया हूँ न अब! हम दोनों मिलकर खेलेंगे। ठीक है न?" वल्लभ के हाथ का तोता बोल उठा।

बोलनेवाले उस तोते को देख वल्लभ की पत्नी और बेटी आश्चर्य में आ गयी। पल भर में ही तोते और बच्ची में ख़ासी अच्छी दोस्ती हो गयी। तोते ने उसे कई कहानियाँ सुनायीं। सोते समय लड़की ने तोते को अपनी बगल में ही सुला दिया।

वल्लभ से सारा वृत्तान्त सुनकर पत्नी ने कहा, "वनदेवी की कृपा से अब तुम्हें लकड़ी काटने की मेहनत करने की कोई ज़रूरत नहीं रही। इस तोते को किसी चौराहे पर ले जाओ और वहाँ इस से बात करना चाहने वालों से एक एक रुपया वसूल करो। तब तो क्या, सोने की वर्षा हो जाएगी!"

वनदेवी से प्राप्त तोते की मदद से इस प्रकार धन कमाना वल्लभ को क़तई पसन्द न था, फिर भी पत्नी के आगे उसकी एक न चलती थी। उसके झगड़ालूपन से वह डरता था, इसलिये उसने उसकी बात मान ली।

दूसरे दिन तोते के साथ खेलने के लिये ज़िद करनेवाली बेटी को कमरे में बन्द कर के वल्लभ की पत्नी ने तोते को उसके हाथ धर दिया।

फिर क्या! कुछ ही क्षणों में बोलने वाले तोते का समाचार सारे गाँव में फैल गया। लोग वल्लभ को घेरे इकठ्ठा हो गये। उसी समय वहाँ का राजा आखेट के बाद राजधानी लौटते हुए वहाँ पहुँच गया।

भीड़ देखकर राजा ने एक सिपाही को भीड़ जमा होने का कारण जान लेने के लिये भेज दिया। सिपाही ने लौटकर बोलने वाले तोते का समाचार राजा को सुनाया।

यह ख़बर सुन राजा क्रोध में आ गया, और उसने अपने सिपाहियों को आदेश दिया, "वह दुष्ट आदमी ऐसे अनोखे तोते को अपने पास रखने की हिम्मत कैसे करता है? उसे तो वह चीज़ मेरी भेंट में लानी चाहिये थी! तुम लोग अभी जाकर उसे छः कोड़े लगाकर तोता मेरे पास ले आओ।"

आदेशानुसार सिपाही वल्लभ को छः कोड़े लगाकर उससे तोता छीन ले गये।

बेचारा वल्लभ किसी प्रकार उठते-गिरते घर पहुँचा। उसको फिर स्वस्थ होने में एक पखवाड़ा लगा। इसके बाद एक दिन पत्नी ने वल्लभ के हाथ कुल्हाड़ी देकर हिम्मत बाँधते हुए कहा, "सुनो, तुम्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। तुम जंगल में जाकर फिर उस चन्दन वृक्ष को काटने का अभिनय करो। उस भोली वनदेवी की कृपा है हम पर। उसके प्रत्यक्ष होते ही कहो कि, आज मेरी पत्नी की सालगिरह है, सात लड़ियोंवाला चन्द्रहार चाहिये।"

वल्लभ तो अपनी पत्नी के डर से थर थर काँपता था। वह उसका कोई प्रतिवाद नहीं कर सका। अनिच्छा से ही वह जंगल में गया

और चन्दन वृक्ष पर उसने कुल्हाड़ी उठायी। तत्काल फिर से वनदेवी साक्षात् हो गयी। लकड़हारे ने उसके समक्ष पत्नी की कही बात दुहरायी।

वनदेवी ने हवा में हाथ लहराया और चम चम चमकनेवाला सात लड़ियोंवाला चन्द्रहार उसके हाथ में आया। वह हार उसने वल्लभ के हाथ सौंप दिया। वल्लभ ने उसे घर जाकर पत्नी को दे दिया। वल्लभ की पत्नी खुशी से फूला न समायी और गले में हार पहनकर वह आसपास के घरों में जाकर अपनी सखियों को दिखा आयी।

एक चोर को इस हार का समाचार मिला और अर्ध रात्री के समय वह वल्लभ के घर घुस आया। पत्नी के गले का हार वह खींचकर ले भागा। खींचातानी में वल्लभ की पत्नी के गले में जो चोट आयी, उससे रात भर वह रोती-कलपती रही।

सबेरा होते ही वल्लभ की पत्नी ने अपने पति से कहा, "अजी सुनो तो! बोलनेवाला तोता और चन्द्रहार हमारे लिये अनुकूल नहीं लगते। हमें अगर जल्दी ही धनवान बनना हो, तो एक उपाय है। आज तुम अपनी खुदकी वर्षगाँठ कहकर वनदेवी से कहो कि, तुम्हें कोई व्यापार शुरू करता है, इसके लिये एक बोरे भर सोने की आवश्यकता है। उन सुवर्णमुद्राओं को लेकर हम किसी शहर में एक सुंदर भवन बनवाकर उसमें रहेंगे। और वहीं कोई व्यापार-धन्धा शुरू करेंगे। इस झोंपड़े में अब एक पल भी गुज़ारना मुझे अच्छा नहीं लगता।"

इस बार भी वल्लभ ने जंगल में जाकर अपनी पत्नी की कही बातें दुहरायी। वनदेवी ने वृक्ष की ओर हाथ हिलाया और उसकी शाखाएँ हिलने लगीं। उन में से स्वर्ण मुद्राओं से भरा एक बोरा नीचे गिर पड़ा। बड़ी मुश्किल से उस बोरे को उठाये वल्लभ घर की ओर चल पड़ा। रास्ते में दो राजभटों से उसकी मुलाकात हुई। पहले तो उन्हें देख कर ही वह घबरा गया।

वल्लभ की घबराहट भाँपकर भटों ने उसकी ओर शंकाभरी दृष्टि से देखते हुए पूछा, "बताओ, बोरे में क्या है?"

काँपते स्वर में वल्लभ कह उठा, "रीठे हैं रीठे!"

भटों ने बोरा खोल कर देखा तो उन्हें बोरे में चमकती हुई स्वर्ण-मुद्राएँ लबालब भरी हुई दिखाई दीं । उन राजसेवकों ने सोचा कि यह कोई बड़ा डाकू है और वे उसे खींचकर राजा के पास ले गये ।

वल्लभ की कैफ़ियत सुने बिना ही राजा ने कह दिया, "एक डाकू की बातों पर विश्वास करनेवाला मैं कोई मूर्ख नहीं हूँ । एक ही डाके में बोरे भर मुद्राएँ लूट पानेवाले तुम ज़रूर कोई पहुँचे हुए कुशल डाकू हो । चाहे जो हो; तुम्हारे कारण आज हमारा खज़ाना भर गया है, इसलिये मैं तुम्हें हल्की सज़ा मात्र दे रहा हूँ ।" इतना कहकर उस मूर्ख राजा ने अपने भटों से कहा कि, वल्लभ को दस कोड़े लगाकर एक महीने कारागार में डाल दिया गया ।

सज़ा समाप्त करने पर वल्लभ घर लौट गया । उसकी पत्नी ने जंग लगी कुल्हाड़ी हाथ में देते हुए इस बार कहा, "सुनो, मेरी बातों को सावधानी से सुनो, कल हमारी बेटी की बरसगाँठ है । वनदेवी से कोई कीमती उपहार ले आओ ।"

मगर, इस बार वल्लभ जंगल तो पहुँचा, लेकिन वह चन्दन वृक्ष के पास भी नहीं फटका । दूसरी दिशा में जाकर हमेशा से कुछ ज़्यादा सूखी लकड़ियाँ उसने काटीं, उन को बाज़ार में बेचकर घर के लिये कुछ सामान खरीदा और एक खिलौनेवाला तोता खरीदकर घर लौटा ।

वल्लभ की पत्नी बड़ी व्यग्रता से उसकी प्रतीक्षा कर रही थी । वल्लभ को देख नाराज़गी से उसने पूछा, "खिलौनेवाला तोता क्यों ले आये हो? वनदेवी ने क्या कहा इस बार?"

वल्लभ ने बड़ी शान्तिपूर्वक उत्तर दिया, "इधर कुछ दिन पहले जो आँधी-तूफ़ान उठा था न, उस में वह चन्दन का पेड़ जड़सहित उखड़ गया । वनदेवी मुझे कहीं दिखाई भी नहीं दी । अच्छा, जाने भी दो; उस माता ने हमारी उपजीविका के लिये इतनी भारी वन संपदा जो भर रखी है! उसीसे हम सुखपूर्वक अपनी ज़िन्दगी काट सकते हैं न!"

उदारता
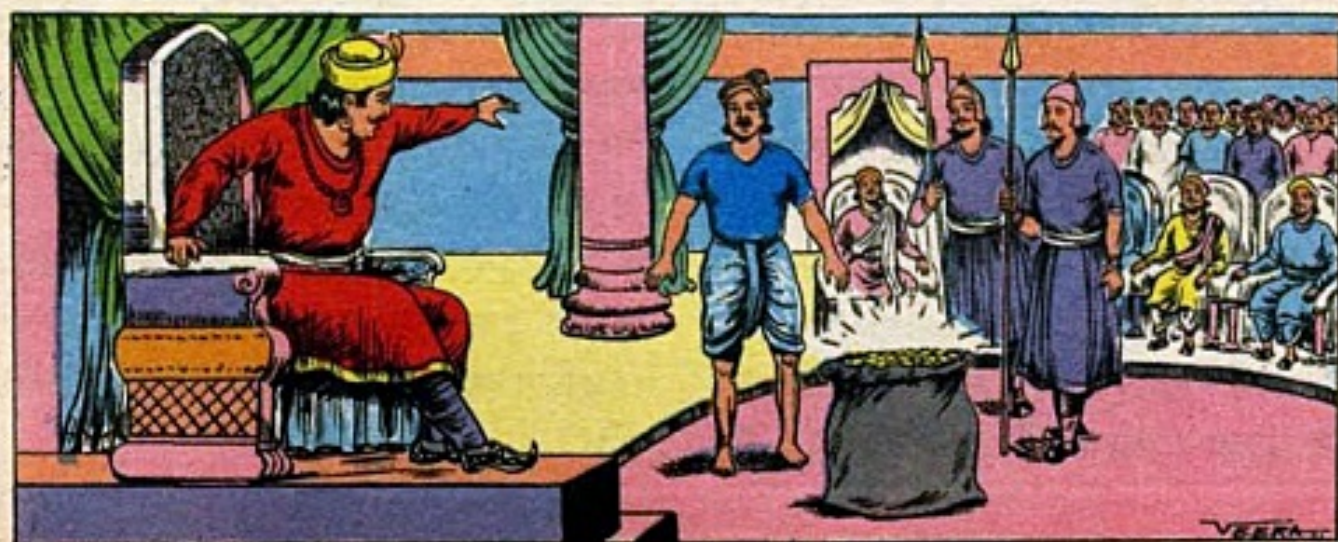
दो हज़ार साल पहले चीन देश में सो-पो-तावू नाम का एक वृद्ध रहा करता था । वह एक अच्छा पंडित था । लेकिन उसके पंडित्य से प्रभावित हो उसकी सहायता करनेवाले दाताओं के अभाव में वह भयंकर दरिद्रता में समय गुज़ार रहा था ।

वहाँ से दूर स्थित चू राज्य का राजा भी एक विख्यात पंडित ही था । लोगों में विश्वास था, कि राजा पंडितों का आदर करता है और उन्हें अपने आश्रय में रखकर बस्तु, वाहन तथा धन देकर उनकी मदद करता है । तावू को कई मित्रों ने सलाह दी, कि वह भी उस राजा के पास जाकर उचित सम्मान प्राप्त करे । मित्रों का अनुरोध वह टाल न पाया, और अपने थोड़े से ऊनी वस्त्र और धन लेकर पैदल ही वह चू राज्य के लिये चल पड़ा ।

चू राज्य सैंकड़ों मील दूर था; तिसपर पहाड़ों से होकर यात्रा करनी थी । रास्ते में जाड़े का मौसम शुरू हुआ । थोड़े दिनों के लिये कहीं विश्राम करने के विचार से तावू एक गाँव में पहुँच कर यांग-चियावू-आयी नामक व्यक्ति के घर गया ।

आयी ने तावू का दिल खोल कर अतिथि-सत्कार किया । तावू एक विख्यात विद्वान है, यह जानकर आयी और ही अधिक प्रसन्न हुआ । मगर आयी भी कोई साधारण व्यक्ति नहीं था । उस के घर में रखे प्राचीन ग्रन्थों को देख तावू समझ गया, कि आयी तो उससे भी कई गुना श्रेष्ठ विद्वान है । उसके साथ चर्चा करने पर तावू को अपना अनुमान ठीक ही जँचा ।

"मैंने सुना है कि चू देश के राजा विद्वानों का बड़ा सत्कार करते हैं । मैं उनके दर्शन करने जा रहा हूँ । तुम भी मेरे साथ क्यों नहीं चलते?" तावू ने आयी से पूछा । आयी ने तावू की बात मान ली और जाड़े के लिये ऊनी

चीन की लोककथा

कपड़े तथा कुछ धन लेकर वह भी ताबू के साथ चल पड़ा ।

थोड़े दिन की यात्रा के बाद बर्फीला तूफ़ान चला । वे दोनों लियांग पर्वत के पहाड़ों के बीच उस तूफ़ान में फँस गये । वैसे और चार दिन प्रवास में ही वे चू राज्य में पहुँच सकते थे, मगर अब इस भयानक तूफ़ान में एक कदम भी आगे बढ़ना उन्हें दूभर हो गया । भयंकर सर्दी में ठिठुरकर मरने की नौबत उनपर आ पड़ी । ख़ास कर वृद्ध ताबू की हालत अत्यन्त ख़राब थी । उसने आयी को समझाया, "देखो बेटे, मेरा अन्तिम दिन निकट आया लगता है । किसी भी हालत में मैं चू राज्य में नहीं पहुँच सकूँगा । मेरे ऊनी कपड़े भी तुम इस्तेमाल करो, तो कम से कम तुम तो अपनी यात्रा जारी रखकर चू राजा के दर्शन कर सकोगे । मैं अपने ये वस्त्र तुम्हें दे देता हूँ; ले लो इन्हें ।"

मगर आयी ने ताबू की बात बिलकुल नहीं मानी । उसने स्पष्ट ही कह दिया कि, "जायेंगे तो दोनों साथ ही जायेंगे, वरना इस सर्दी में ठिठुर कर दोनों ही मर जायेंगे । मगर आप के ऊनी वस्त्र लेकर मैं आप की मृत्यु का कारण न बनूँगा । मुझे आप की बात बिलकुल स्वीकार नहीं है ।"

"बेटे, तुम अभी जवान हो । मैं मृत्यु के निकट खड़ा वृद्ध हूँ । चू देश का राजा मेरा सम्मान करे. न करे मेरे लिये सब समान है । हम दोनों में से किसी एक को ज़िंदा रहना हो, तो तुम्हारा जीना अधिक उपयुक्त न होगा? इस के अलावा, तुम मुझ से भी कहीं अधिक पहुँचे हुए विद्वान हो । इस लिए मैं कहता हूँ, तुम मेरी बात मानो ।" ताबू के अनेक प्रकार से समझाने पर भी आयी ने उसकी एक

न सुनी ।

बर्फ़ से बचने के लिये वे दोनों एक गुफ़ा में जा टिके ।

तावू ने सुझाया, ''कहीं कुछ सूखी लकड़ी मिल सके तो जरा अलाव ताप सकेंगे न!'' इस पर आयी लकड़ी खोजने के लिये गुफ़ा को छोड़कर खुद बाहर निकला और बर्फ़ीली घाटी में कूद पड़ा ।

आयी ने लौटकर देखा, तो वहाँ तावू के वस्त्र मात्र थे । बाहर निकल कर आयी ने तावू को खोजा, तो बर्फ के एक गढ़े में तावू का निष्प्राण शरीर उसे मिला ।

अपने लिये प्राण त्यागनेवाले तावू की उदारता का स्मरण करके आयी रो पड़ा । तावू का शरीर उठाकर वह उस गुफ़ा में ले आया । उसे सुरक्षित रखकर और तावू के वस्त्र पहन कर वह कुशलपूर्वक चू देश में पहुँचा ।

चू राजा आयी के पांडित्य से बड़ा ही प्रभावित हुआ । उसको अपने दरबारी कवि के पद पर नियुक्त कर राजा ने उसे बहुत सारी वस्तुएँ, वाहन तथा धन दिया ।

राजा का सम्मान प्राप्त करते समय आयी की आँखों में आँसू देख राजा ने कारण पूछा । ''प्रभु! आप मेरा यह सम्मान कर रहे हैं; लेकिन तावू की उदारता के सामने मेरे पांडित्य का महत्त्व ही क्या है?'' आयी ने कहा ।

तावू के त्याग का समाचार सुनकर राजा भी आश्चर्य में आ गया । आयी को साथ लेकर वह उस गुफ़ा में पहुँचा, जहाँ तावू का शरीर अभी तक सुरक्षित था । बड़े वैभवपूर्वक तावू की अन्त्येष्टि क्रिया संपन्न करवाकर राजा ने वहीं पर एक समाधि बनवायी ।

इसके बाद आयी हर साल उस समाधि के दर्शन कर अश्रुपात करता था । बाद में चीन के कवि व पंडितों के लिये तावू की समाधि एक बहुत महत्त्व का तीर्थ-स्थान बन गया । सब लोग उसके दर्शनार्थ जाते हैं ।

मेहनत का फल

रामनगर गावँ के निवासी कृष्णचन्द और दिलीपचन्द ने मिलकर एक बगीचा खरीदा ।

कृष्णचन्द बागवानी का काम बिलकुल नहीं जानता था। वह सदा ईश्वर के ध्यान-भजन में ही लीन रहता था ।

दिलीपचन्द बागवानी अच्छी तरह जानता था । घास निराना, सुन्दर क्यारियाँ बनाना, पानी सींचना वगैरह कामों में उसका पूरा दिन गुज़र जाता था ।

उस वर्ष बगीचे में खूब फल लगे । उन्हें बेचने पर काफी बड़ी रकम हाथ आयी । अब समस्या यह थी कि इस रकम का बँटवारा कैसे किया जाये? धन बराबर बाँट लेना दोनों को भी पसन्द न था ।

"मैंने दिन-रात कड़ी मेहनत की, तभी तो पेड़ों में इतने अच्छे फल लगे—इसलिये मुझे ज़्यादा हिस्सा मिलना चाहिये ।" दिलीपचन्द का कहना था ।

तो इधर कृष्णचन्द का आग्रह था कि, "मैंने निश्चल भाव से ईश्वर की आराधना की । इसी से प्रसन्न हो भगवान ने इतना उत्पन्न दिया है । मेरा हिस्सा बड़ा होना चाहिये ।"

थोड़ी देर दोनों में वाद-विवाद चला और आखिर झगड़ा निपटाने के लिये वे गाँव के अधिकारी के पास गये ।

अधिकारी ने दोनों का तर्क सुनकर समझाया, "सुनो, मैं तुम दोनों को एक छोटा सा काम देता हूँ । आज ही रात उसे पूरा करके दोनों कल सुबह मुझ से मिल लेना । तब मैं अपना फैसला सुनाऊँगा ।"

बाद में अधिकारी ने दोनों को दो-दो बोरे धान देकर कहा, "इसे कूट कर चावल बनाकर कल सुबह मेरे पास ले आना ।"

धान लेकर कृष्णचन्द और दिलीपचन्द

२५ साल पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

दोनों अपने अपने घर चले गये ।

कृष्णचन्द ने धान कूटने का प्रयत्न बिलकुल नहीं किया । धान को चावल में बदलने का भार भगवान पर छोड़कर, थोड़ी देर ईश्वर का ध्यान करके वह सो गया ।

मगर दिलीपचन्द ने रात भर जाग कर एक बोरा धान कूटा और उसका चावल बना पाया ।

अर्धरात्रि के समय गाँव का अधिकारी दोनों के घरों के रास्तों से हो निकला । कृष्णचन्द का घर शान्त था, कोई आवाज़ नहीं थी वहाँ; मगर दिलीपचन्द के घर से धान कूटने की आवाज़ बराबर आ रही थी ।

दूसरे दिन कृष्णचन्द और दिलीपचन्द अपने अपने बोरे लेकर गाँव के अधिकारी के घर पहुँचे । अधिकारी ने कृष्णचन्द के लाये दोनों बोरों को खोल कर देखा । उन में चावल का एक दाना तक नहीं था । कृष्णचन्द ने सोचा था, कि ईश्वर के अनुग्रह से सारे धान के चावल अपने आप बन जायेंगे । पर ऐसा न हुआ देखकर वह आश्चर्य में आ गया ।

दिलीपचन्द के बोरों में से एक चावल से भरा था और दूसरे में था धान!

"देख रहे हो न कृष्णचन्द! मेहनत किये बिना फल कतई नहीं मिलता । तुम ने मेहनत किये बिना केवल भगवान पर भरोसा रखा और तुम्हें उसका कोई फल नहीं मिला । मेहनत किये बगैर यों ही हाथ पर हाथ धरे बैठ रहने से उसका अंजाम यही निकलता है । बगीचे से जो आमदनी हुई थी न, वह केवल दिलीपचन्द की मेहनत के कारण! तुम ने भी दिलीपचन्द के साथ अगर मेहनत की होती, तो इससे अधिक आमदनी हो जाती । आइन्दा तुम दोनों मिलकर मेहनत करो और उस आमदनी को बराबर बाँट लो ।" अधिकारी ने ठीक बात समझा दी ।

उसके बाद कृष्णचन्द ने भी दिलीपचन्द के साथ बगीचे में खूब मेहनत की । सारे काम साथ-साथ किये । उस दिन से आमदनी को बाँटते वक्त उन के बीच कोई झगड़ा न हुआ ।

प्रकृति के आश्चर्य :

सब से बड़ा बीज

विश्व का सब से बड़ा बीज कोको डी मेर है, जो केवल सेजल्ली द्वीप में पाया जाता है। इसका वजन ४० पौंड होता है (१८ किलो)।
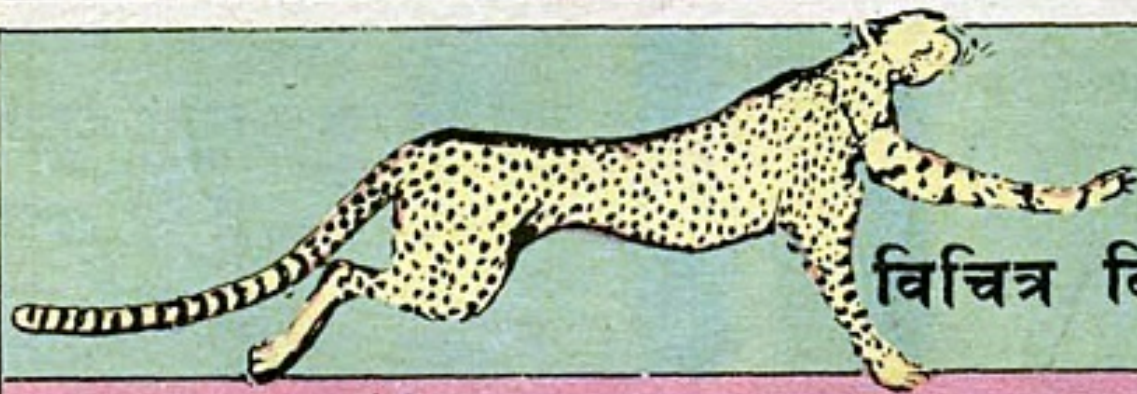
विचित्र बिल्ली

चीता यद्यपि बिल्ली के परिवार का माना जाता है, फिर भी वह अपने पंजे को बिल्ली जैसे सिकोड़ नहीं सकता है। और न ही वह बिल्ली जैसे छिपकर और छलांग ल कर अपनी शिकार पकड़ सकता है। वह पीछा करके अपना शिकार पकड़ता है।

स्नेहिल पक्षी

आफ्रिका का एक वीव्हर-बर्ड सूखी घास के तिनकों से सामूहिक-गृह की भांति अपना घोंसला बनाता है। पहले वह ऊपर की छत बनाकर उसके बाद नीचे से प्रवेश करने लायक, अनेक खानों वाला घोंसला बनाता है !

पर्यटन विभाग भारत सरकार

दर्रा आ गया...

कितना कूड़ा छोड़ गये हैं वे यहाँ! और यह आग, जो अभी तक नहीं बुझी।

हवा चली, कागज़ और प्लास्टिक के डिब्बों ने आग पकड़ी और पूरा इलाका धू-धू करके जलने लगा।

यह तो अच्छा हुआ कि हमने धुआँ देखा और दौड़ पड़े। पर तब तक आग लगाने-वाले भाग गये।

वे हमें झरने के पास मिले थे। हम दौड़ कर जायें तो उन्हें पकड़ सकते हैं।

पगडंडी से चलो। हम उनसे पहले ही रेंजर की चौकी पर पहुँच जायेंगे और उन्हें पकड़ लेंगे।

तेज़ी से कूच करते हैं...

वे रहे वे, रेंजर साहब!

चलो बदमाशों! अब पुलिस के मेहमान बनो। इन सुन्दर पहाड़ों पर गंदगी फैलाते हो... जंगल में आग लगाते हो...

शुक्रिया बच्चों! तुमने शानदार काम किया है।

आओ, मेरे साथ चलो। मैं तुम्हें दर्रा पार कराऊंगा।

अपना भारत सुन्दर

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां फरवरी १९९० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

M Natarajan

P. V. Subrahmanyam

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ दिसम्बर १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

अक्तूबर के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : **अपना हाल मुझे सुनाओ !**

द्वितीय फोटो : **क्या हुआ, मुझे दिखाओ !!**

प्रेषक : रवीन्द्रसिंह, सिविल लाइनमन (एस्. यडं) अलीगढ़ (उ. प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीज, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
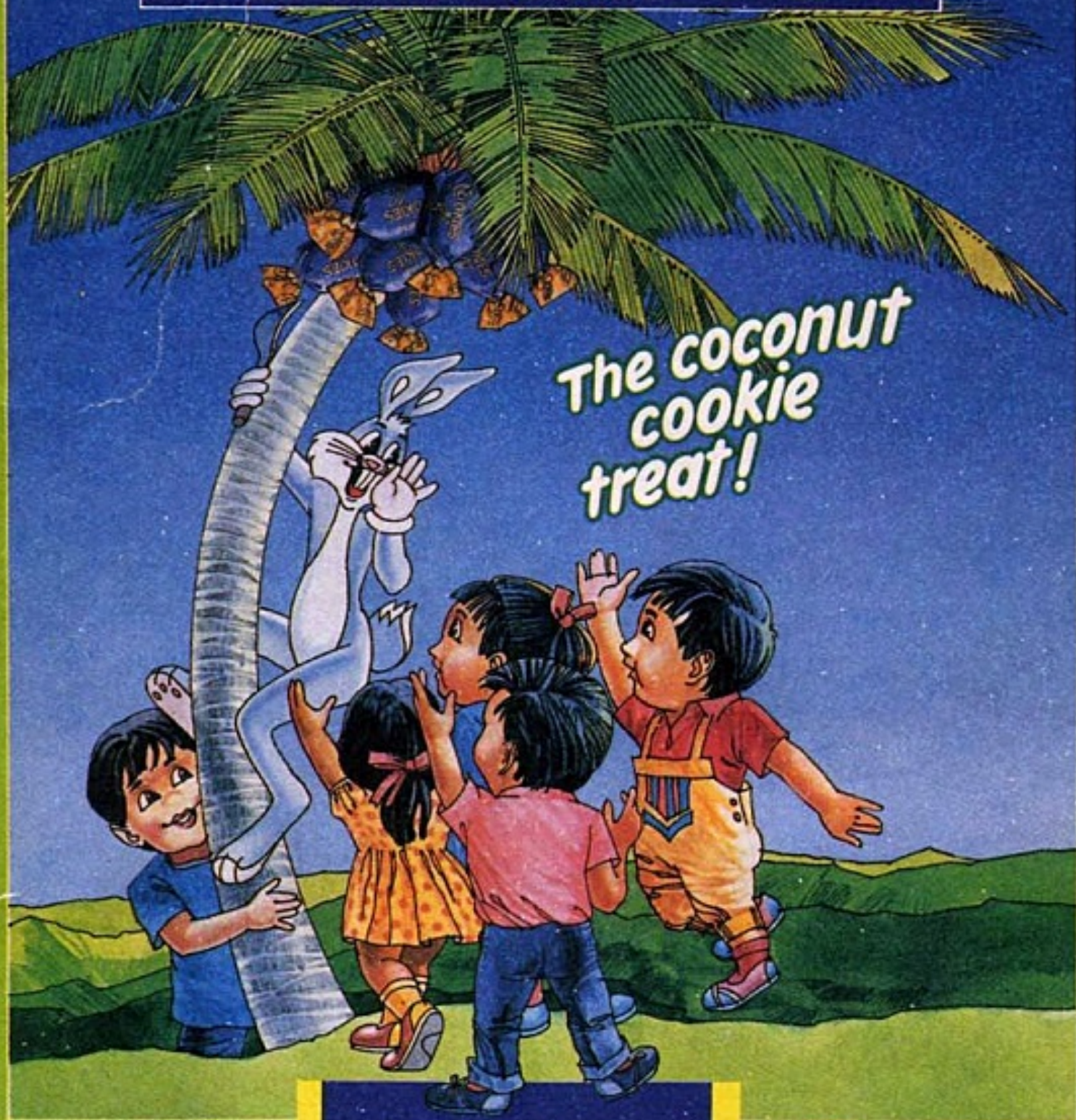
CRUNCHY, MUNCHY SWEETS
The coconut cookie treat!
nutrine
COOKIES
THE FINEST, WIDEST RANGE
nutrine
India's largest selling sweets